ओमप्रकाश वाल्मीकि

महत्वपूर्ण दलित साहित्यकार। 30 जून 1950 को बरला, मुजफ्फनगर उत्तर प्रदेश में जन्म। वाल्मीकि ने अपने लेखन से दलित साहित्य को बहुत समृद्ध किया। आत्मकथा, कहानियां, कविता, आलोचना लिखकर दलित साहित्य को एक ठोस पहचान दिलवाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। दलित विमर्श के भीतर कई नए सवाल खड़े करने का श्रेय इन्हें जाता है। दलित साहित्य में आन्तरिक जातिवाद को लेकर सबसे पहले सवाल इन्होंने ही उठाया। 'जूठन' आत्मकथा हिन्दी दलित साहित्य की शुरूआती आत्मकथा रही जिसने अपार प्रसिद्धि हासिल की। 'जूठन' के पंजाबी, अंग्रेजी, स्वीडिश, जर्मनी, तमिल, मलयालम, कन्नड़ सहित तमाम भाषाओं में अनुवाद हुए। 'सलाम' और 'घुसपैठिये' कहानी संग्रह प्रकाशित। 'सदियों का संताप', 'बस्सः बहुत हो चुका' और 'अब और नहीं' कविता संग्रह के अतिरिक्त 'दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र', 'सफाई देवता' तथा 'मुख्य धारा और दलित साहित्य' आलोचना की किताबें भी प्रकाशित हुईं। फिलहाल उपन्यास लिखने में व्यस्त हैं।

सम्पर्क :- सी-5/2, आर्डनैंस फैक्टरी इस्टेट,
देहरादून - 248008
मो. - 09412319034

नालन्दा पर गिद्ध

देवेन्द्र

बनारस विश्वविद्यालय के हिन्दी विभागाध्यक्ष आचार्य चूड़ामणि प्राचीन परम्परा के संरचनावादी समीक्षक थे। मनु महाराज के वर्ण विभाजन और स्त्री संबंधी आग्रह आदि में उनकी अटूट आस्था थी। अनेक विश्वविद्यालयों की, पाठ्यक्रम समिति के प्रभावी सदस्य, थीसिसों के परीक्षक, हिन्दी के प्रसार और विकास के लिए स्थापित अनेक संस्थाओं के संरक्षक और खुद अपने विश्वविद्यालय में 'डीन ऑफ स्टूडेन्ट्स' जैसे महत्वपूर्ण पदों की जिम्मेवारियां संभाले हुए व्यस्त रहा करते थे। एक कैबिनेट मंत्री की थीसिस उन्होंने खुद लिखायी थी। शहर के मेयर और शराब के ठेकेदार मनोहर जायसवाल की पुत्रवधु उन्हीं के निर्देशन में शोध कर रही थीं। उनका व्यक्तित्व एक ऐसे वटवृक्ष की तरह था जिसने अपनी मूल जमीन की सारी उर्वराशक्ति को सोखकर उसे बन्ध्या कर दिया था। जिसके कोटरों में साँप, चमगादड़, नेवले और गिरगिट सुख चैन से रह रहे थे। जिसकी उन्नत शाखाओं पर बैठे गिद्ध हर क्षण मृत्यु की टोह में दूर टकटकी लगाये रहते। विश्वविद्यालय में नियम था कि कोई प्रोफेसर दो साल से ज्यादा विभाागाध्यक्ष के पद पर नहीं रहेगा। लेकिन आचार्य चूड़ामणि के दरबार में सारे नियम-कानून पायदान की तरह बिछे रहते। कीचड़ और गंदगी पोंछने के काम आते थे सारे नियम और कानून।

सुबहे-बनारस! पंचगंगाघाट की सीढ़ियों पर हो या ठठेरी बाजार की सँकरी गलियों में चाहे जहाँ हो। उसके अस्त का उत्सव आचार्य चूड़ामणि के दरबार में

ही धूमधाम से सम्पन्न होता। आर एस एस और विद्यार्थी परिषद के नेता जमा होते। विश्वविद्यालय के एक-एक विभाग और एक-एक व्यक्ति के बारे में वे सारी सूचनाएं सौंपकर मंत्रणादान पाया करते थे। आचार्य उतने बड़े संगठन के गॉडफादर थे। कहा जाता है कि विश्वविद्यालय के उस सिंहपीठ पर रहते हुए चूड़ामणि जी ने कश्मीर से कन्याकुमारी और असम से गुजरात तक के हिन्दी विभागों को अपने प्रभामंडल से आच्छादित कर रखा था। विभागाध्यक्षों और प्रोफेसरों के अलावा नये लेक्चरर और चपरासियों तक की नियुक्ति उन्हीं की मरजी से होती थी। "तेरी सत्ता के बिना हे प्रभु मंगल मूल, पत्ता तक हिलता नहीं...."

वे अस्सी के दशक के प्रारम्भिक वर्ष थे। तब 'ग्लासनोस्त' और 'पेरोस्त्रोइका' जैसी घटनाएं सोवियत रूस में नहीं हुई थीं। 'पार्टी हेडक्वार्टर' को ध्वस्त करने की सांस्कृतिक क्रान्ति की अपील का उत्साह था। पद, प्रतिष्ठा, उम्र और अनुभव आदि की दुहाई देकर कौन इतिहास का रास्ता रोक रहा है? उसकी खोज करो!

विश्वविद्यालयों में मार्क्सवादी विचारधारा और वामपंथी अश्वमेध का घोड़ा कालिदास, भवभूति, तुलसी और बिहारी के बाद मैथिलीशरण गुप्त तक को रौंदता, किसी कालातीत सौन्दर्यशास्त्र के लिए भागता चला जा रहा था। अस्सी के दशक के उन शुरूआती वर्षों में आचार्य चूड़ामणि जितना क्षुब्ध, दुःखी, उदास और आहत रहा करते थे उतना पहले कभी नहीं। रूखे चेहरे, बढ़ी दाढ़ी, धँसी आँखों पर चश्मा लगाये बड़े-छोटे का सारा लिहाज छोड़कर बहस करते, सिगरेट पीते इस नयी वामपन्थी प्रजाति को देखकर वे वाकई बहुत खिन्न रहा करते थे। साम और दाम! एक दिन जब उन्होंने जलेश्वर से कहा कि तुम बहुत योग्य और होनहार लड़के हो तो वह बेशर्मों की तरह हँसने लगा- "लेकिन मुझे नौकरी नहीं करनी है... और आप मुझे बेवजह दाना डाल रहे हैं। मैं यहाँ पार्टी का काम करने आया हूँ।"

वह महेश्वर की पार्टी का सक्रिय और उसी का छोटा भाई था। महेश्वर के

बारे में किंवदन्ती थी कि एक बार नेपाल के एक पहाड़ी ढाबे पर जाड़े की सुबह गरम-गरम जलेबी और दही खाते हुए वह एक बूढ़े आदमी से बे-तरह उलझ गया। बूढ़ा आदमी बार-बार कुछ कहना चाहता था, लेकिन उसे इसका अवसर नहीं मिल रहा था। महेश्वर ने उसे बताया कि थोड़ा गाँवों में लोगों के बीच जाकर आप उनके अनुभवों से भी सीखें। बूढ़ा थक-हार कर उठा और चला गया। बाद में ढाबे के नौकर ने बताया कि ये चीन के चेयरमैन माओ-त्से-तुंग थे। आगे महेश्वर ने जो कुछ कहा और किया वह किवदन्ती में नहीं है। जलेश्वर उसी महेश्वर का छोटा भाई था। दिन में नुक्कड़ नाटक करता। कविताएँ रचता और रात भर जागकर शहर की दीवारों पर नारे लिखा करता था। विश्वविद्यालय में उसकी अपनी मण्डली थी, जो हमेशा चुनौती देती थी। साहित्य, कला, संस्कृति और इतिहास पर बहस करती थी। और अंत में वही करती और कहती थी जो महेश्वर उसे चिट्ठी में लिखकर बताता था।

आचार्य चूड़ामणि जी के योग्य शिष्य सुबोध मिसिर यूँ तो शान्त स्वभाव के गंभीर व्यक्ति थे। लेकिन अपने गुरुदेव के अपमान और क्षोभ को देखकर उन्होंने चुपचाप कमर कसी। फिर तो मार्क्सवादी अश्वमेध का जो घोड़ा सबको रौंदता चला जा रहा था, एक दिन उसकी लगाम पकड़ ली गयी। शास्त्रार्थ की कई परम्पराएँ शुरू हुईं। मशीनी नतीजे और जड़ आस्थाएँ एक-दूसरे से टकराने लगीं। एक तरफ कबीर, प्रेमचंद, निराला और मुक्तिबोध थे तो दूसरी ओर तुलसीदास, आचार्य शुक्ल और हजारीप्रसाद द्विवेदी। जाहिलों और जातिवादियों का सगठन आर.एस.एस. सुबोध मिसिर जैसे जहीन, पढ़ाकू और संयमित व्यक्ति का संसर्ग पाकर नयी जीवनी शक्ति से भर गया। अपनी वेशभूषा और रहन-सहन में वे शुद्ध रूप से देहाती थे। कुर्ता, पाजामा और चप्पल के अलावा कभी-कभार उनके कन्धे पर सफेद गमछा पड़ा होता था। अकसर सामने वाला उन्हें देखकर धोखा खा जाता। सुर्ती खाने के अलावा और कोई व्यसन उन्हें छू न सका था। स्त्रियों के बारे में उनके वही विचार थे जो कवियों के बारे में प्लेटो

के। कल्पनाओं के फितूर और वाहियात के सपनों में उनकी कोई रुचि न थी। उनका ज्यादातर समय पुस्तकालय में बीतता था। और शाम को नियमित गुरुदेव आचार्य चूड़ामणि के दरबार में जाकर चरण-स्पर्श करते। उन दिनों गुरुदेव का इकलौता श्रवणकुमार एम.ए.अन्तिम वर्ष हिन्दी से कर रहा था। कभी फुर्सत में सुबोध मिसिर उसे घंटों बढ़ाया करते। उन्हें इस बात का मन ही मन अफसोस था कि गुरुदेव का पुत्र होनहार नहीं है। बल्कि एकदम मूर्ख और बोदा।

वह बनारस विश्वविद्यालय का नवजागरण काल था। नये-नये लेक्चरर, वृद्ध रीडर और प्रोफेसर से लेकर क्लर्क शर्माजी और चपरासी रामदीन तक, सबके साले-साली, बेटे, बहू, दामाद और जीजा-जीजी तक हिन्दी से एम.ए., पी.एच. डी. कर रहे थे। परीक्षाओं से एक रात पहिले पान की दुकानों पर पर्चे वितरित होने लगते। जिन्हें क्रमवार स्वर और व्यंजन का बोध नहीं था वे पिछले सारे रिकार्ड तोड़कर धड़ाधड़ प्रथम श्रेणी पास होते चले जा रहे थे। 'ग्लोब्लाइजेशन' से बहुत पहले ही एशिया का यह सबसे बड़ा विश्वविद्यालय गाँव की शक्ल ले रहा था। पड़ोसी देशों से बड़ा बजट लेकर मानव संसाधन मंत्रालय, यू.जी.सी. और सी.एस.आई.आर. का संचित खजाना यहाँ की गन्दी नालियों में औंधे मुँह गिरा पड़ा था। रामनाम की लूट है, लूट सके तो लूट...

अध्यापक संघ का चुनाव होने वाला था। ब्राह्मण, भूमिहार राजपूत और कुर्मी अपनी-अपनी दुकानें सजा रहे थे। उछल-कूद, मारपीट और हाथापाई। इस युद्धभूमि में सब कुछ जायज था। आचार्य चूड़ामणि राजपूत लॉबी के महत्वपूर्ण स्तंभ थे। गुंडावाहिनियाँ उनका चरण-रज लेकर धन्य हुआ करती थीं। भारतीय संस्कृति और राष्ट्रवाद की भावना जगाने वाली एक संस्था के ब्राह्मण वर्चस्व को खत्म करके उन्होंने उसे अपने मातहत कर लिया था।

कुर्ता-पाजामा पहनने वाले सुबोध मिसिर एक गरीब किसान के होनहार बेटे थे। बचपन में ही उन्होंने शतात्माओं के निर्वाणोपरांत जिस स्वर्गलोक की कल्पना कर रखी थी, और जो उन्हें धवल रूई के बादलों पर सुनहले द्वीप की तरह

तैरता हुआ दिखायी देता था, वहाँ जाकर उन्होंने देखा कि सारे देवतागण अनवरत आत्मरति के शिकार अपनी ही वासनाओं में हस्तमैथुन किये जा रहे हैं। चुनाव पूर्व अध्यापक संघ की मीटिंग चल रही थी। झाँव-झाँव, काँव-काँव। लोग क्या बोल रहे हैं? गोबर और गू में लिथड़े-पड़े शब्दों की शक्ल खो गयी है। अचानक कॉमर्स के एक मोटे मुस्टंड भूमिहार प्रोफेसर ने भौतिक विज्ञान के दूसरे कर्मी प्रोफेसर को उठाकर मंच पर ही दे पटका। लातों और घूंसों के अनवरत प्रवाह में नीचे वाले ने ऊपर वाले का कान दाँत से काट लिया। खून की धारा और चीख के बीच एक दारोगा ने डंडा फटकारा- "आप लोग लड़कों को क्या पढ़ाओगे?" उसने दोनों को धकियाकर एक-दूसरे से अलग किया। बनारस विश्वविद्यालय का यह चलता फिरता यथार्थ पौराणिक आख्यानों और मिथक कथाओं से भी ज्यादा अविश्वसनीय और लोमहर्षक था।

निरक्षरता और अज्ञानता के अँधेरे में डूबे गाँवों के जो लोग शताब्दियों से एक ही अन्न खाते चले आ रहे हैं, और जो लोग धारासार बरसात की काली अँधेरी रात में साँपों, बिच्छुओं और गोहों से पटी पड़ी मेड़ पर भुकभुकाती लालटेनों के सहारे बचते-बचाते फावड़ा लेकर नाली बाँधने चले जा रहे हैं। जो लोग क्वार की जहरीली धूप में बैलों के साथ सिर झुकाये खेत जोत रहे हैं। जाड़े की ओस और ठंड में काँपते-ठिठुरते जो लोग सिवान के निर्जन सन्नाटे में महीनों से सारी रात बैठकर सिर्फ बिजली की प्रतीक्षा कर रहे हैं। उन सारे लोगों के जीवन में जातिसूचक शब्द सत्ती मैया के चौरे की तरह निर्जीव कोने-अँतड़े में पड़ा हुआ है। शादी, समारोह, तीज, त्योहार पर वे वहाँ चढ़ावा चढ़ाते और फिर भूल जाते। वही जातिसूचक शब्द सभ्यता और आधुनिकता का समारोह मनाने वाले विद्वानों की इस बस्ती का मूल मन्त्र बना हुआ है। चारों और ब्राह्मण राजपूतों को, राजपूत कायस्थों और भूमिहारों को, भूमिहार कुर्मियों को गालियाँ दे रहे हैं। इस बार अध्यापक संघ के चुनाव में कुर्मी अपना पक्ष तय नहीं कर पाये। इधर मन्दिर का महन्थ, जो विज्ञान संकाय का डीन भी है, उसने पूर्वांचल

के सबसे बड़े माफिया डॉन, विधायक, नर हत्याओं के कुख्यात अपराधी और ब्राह्मण सभा के अध्यक्ष की मदद से भूमिहारों से तालमेल कर लिया। अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और महामंत्री तीनों सीटों पर ब्राह्मण प्रत्याशियों की जीत से राजपूत लॉबी को लकवा मार गया। मन्दिर के महन्थ के यहाँ मिठाइयों का दौर शाम से चल रहा था। भूमिहार विशेष रूप में आमन्त्रित थे। विजयोल्लास के कहकहे गूँज रहे थे।

उधर आचार्य चूड़ामणि के दरबार में एक लाश रखी हुई थी। इतिहास की लाश। सारे क्षत्रप शोकमग्न सिर झुकाये बैठे थे। पराजय और अपमान से आहत। किंकर्तव्यविमूढ़ संघ के नगर संचालक महातिम सिंह ने आर्य पराभव के मूल पर टिप्पणी की और फुसफुसाये – "मुसलमानों से भी खतरनाक होते हैं ये सँपोले! कुछ न कुछ जरूर करना पड़ेगा इस बार।" वे लंबी साँस खींच कर उठे और शाम के धुँधलके में कहीं खो गये।

ठीक रात के बारह बजे जब लोग महन्थ जी के यहाँ से लौटकर पान की दुकान पर खड़े हुए ही थे कि राजपूतों की गुंडावाहिनी ने हॉकी और लोहे की राडों से उन पर हमला कर दिया। इस बात का विशेष ध्यान रखा गया कि ब्राह्मणों के साथ कहीं कोई भूमिहार न पिट जाय। वरना, यह समीकरण स्थायी होकर दूर तक नुकसान करेगा।

थोड़ी देर बाद गुंडों की तलाश में पुलिस और पी.ए.सी. का भारी जत्था हॉस्टल में घुसा। उस समय सारी घटना से बेखबर लड़कों की समझ में कुछ नहीं आया। पी.ए.सी. जब छात्रवासों में जाती है तो उसका ध्यान घड़ी, पर्स और रुपये, पैसों पर ज्यादा होता है। लड़कों ने जिन्दाबाद-मुर्दाबाद करना शुरू किया। लाठी चार्ज होने लगा। शहर कोतवाल ब्राह्मण था। जिले का सी.जे.एम. भी ब्राह्मण था। और वह भी, जो होना चाहता था किसी गली का शोहदा, किसी नुक्कड़ का गुंडा या किसी थाने का दारोगा, लेकिन दुर्भाग्य से प्रोफेसर बना, चीफ प्राक्टर भी ब्राह्मण था। वह गुस्से से थरथर काँपते

हुए पी.ए.सी. वालों को ललकार रहा था। एक जवान के सिर पर पत्थर लगा। उसने दौड़ाकर लड़के को पकड़ा और तिमंजिले पर ले जाकर सीधे उठाया और नीचे फेंक दिया।

महीने भर बाद होने वाले छात्र-संघ के चुनाव में सारा समीकरण बदलने लगा। वामपंथी प्रत्याशी विजयानंद शाही मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारधारा का सशक्त दावेदार बनकर उभर रहा था। पिता भ्रष्टाचार के मामले में सस्पेंड, सिंचाई विभाग में जूनियर इंजीनियर थे। शहर में मकान था। पैसे की चिन्ता नहीं थी। आचार्य चूड़ामणि ने सोचा कि 'विचारधाराएँ तो परिवर्तनशील होती हैं। उम्र और परिस्थिति से निर्धारित। मूल सत्य तो जाति है।' आर.एस.एस. की राजपूत और भूमिहार लॉबी ने विद्यार्थी परिषद के शिवानन्द ओझा के खिलाफ अध्यक्ष पद पर शाही का समर्थन कर दिया। वामपन्थ की शानदार विजय दर्ज हुई। उसी पैनल का दूसरा हरिजन प्रत्याशी मात्र पचासी वोट पाकर वीरान और बेजान पसरी सड़क पर अकेले क्रान्तिवाद जिन्दाबाद चिल्लाता चला जा रहा था। जब थक गया और मुँह से झाग आने लगा तो जगजीवनराम छात्रावास के अपने कमरे में जाकर भूखे पेट सो गया।

उस समय आचार्य चूड़ामणि के रिटायर होने मे दो वर्ष और बाकी थे। इसलिए जब उनको 'माइल्ड हार्ट अटैक' हुआ तो लोगों ने उसकी तरह-तरह की व्याख्या की। किसी ने बताया कि दरअसल, यह हार्ट अटैक महज एक नाटक है। अध्यापक संघ के चुनाव के बाद जिन ब्राह्मण प्रोफेसरों को मारा गया है उसके लिए कुलपति ने हाईकोर्ट के एक रिटायर जज से जाँच शुरू करा दी है। वह उसी जाँच समिति से बचने का बहाना है।

यह बात सच है या नहीं। लेकिन यह जरूर है कि हफ्ते भर पहले जब इस जाँच समिति की घोषणा की गयी थी तो आचार्य चूड़ामणि की प्रतिक्रिया यही थी कि – "कुलपति ब्राह्मण। हाईकोर्ट का रिटायर जज ब्राह्मण! इसमें जाँच कराने से क्या? एक तरफ फैसला होगा...

"इसमें होगा क्या गुरुदेव?" - पास बैठे एक लड़के ने, जो विश्वविद्यालय में ठेके लेता है, पूछा।

आचार्य चूड़ामणि मुस्कराये- "एक रजिस्टर गन्दा होगा। जज साहब रिटायर हो चुके हैं। दस-बीस बार ए.सी. का किराया और भोजन-पानी का कुछ पैसा मिल जायेगा।" मसनद पर थोड़ा उठंगकर उन्होंने दीवान के नीचे से पीकदान खींचा और कंठ तक भर आयी घृणा को पिच्च से थूक दिया।

कुछ लोग इस हार्ट अटैक की व्याख्या बिलकुल दूसरे ढंग से कर रहे थे। उन लोगों का कहना था कि हृदयहीन लोगों को हार्ट अटैक कैसे हो सकता है? हो न हो, यह भदैनी की उस हवेली को हारने का दुःख है जिसमें पच्चीस रुपया किराया देकर आचार्य पिछले पैंतीस सालों से रह रहे हैं। उनका अपना मकान, पी.डब्लू.डी. विभाग के बतौर ऑफिस, अठारह हजार रुपये किराया पर उठा है। अब अगर उन्हें अपने मकान में जाना पड़ा तो हर महीने अठारह हजार रुपये का घाटा।

हालाँकि इस बात में भी कुछ दम नहीं है। क्योंकि आचार्य के खिलाफ फैसला सिर्फ निचली अदालत से हुआ है। ऊपर की अदालत ने 'स्टे' दे दिया हैं इसके बाद तो हाईकोर्ट है। फिर सुप्रीम कोर्ट। तब तक आचार्य की तीन पीढ़ियाँ इसमें गुजर जायेंगी।

इन सब बातों के अलावा, कुछ लोग जो ज्यादा ही कृतघ्न बुद्धि के होते हैं और बेवजह हर समय हर किसी की दीवाल में छेद करके वहीं चौबीस घंटे आँख गड़ाये रहते हैं, हर छोटी-बड़ी घटना में जो लोग पुत्रों, बहुओं और बेटियों को खींच लाते हैं, उन सबका कहना था कि 'रिटायरमेंट' नजदीक है। बेटा एम.ए. में है। कुलपति पिछले दस सालों से विश्वविद्यालय के रुके इंटरव्यू को रात-दिन कराने के लिए आमादा है। अगर इस समय इंटरव्यू हो गया तो मेरे श्रवणकुमार का क्या होगा? फिर तो अगले दस साल तक इंटरव्यू नहीं होगा। दरअसल, यह हार्टअटैक श्रवणकुमार की चिन्ता से है।

ले-देकर यही बात सत्य के ज्यादा करीब हो सकती थी। क्योंकि अस्पताल के प्राइवेट वार्ड में भर्ती आचार्य को जैसे ही यह बात पता लगी कि विभाग में इंटरव्यू की तारीख तय हो गयी है, उन्होंने डॉक्टर के मना करने के बावजूद अपने को पूर्णतया स्वस्थ घोषित किया और रिक्शा पकड़कर सीधे विभाग के लिए चल पड़े।

उस दिन विभाग में अफरा-तफरी मची थी। लोग अनुमान लगा रहे थे कि अभी तो आचार्य चूड़ामणि हार्ट अटैक के मरीज होकर अस्पताल में भर्ती हैं, इसलिए नंबर दो के रीडर आचार्य भवेश पाण्डेय जी अध्यक्ष की हैसियत से इंटरव्यू बोर्ड में बैठेंगे। - "लेकिन वे कैसे बैठ सकते हैं" - किसी ने शंका जाहिर की - "वे तो खुद ही प्रोफेसर पद के प्रत्याशी हैं, और दूसरे उनकी पुत्रवधू लेक्चररशिप के लिए अप्लिकेंट है।" दूसरे ने प्रतिवाद किया - "हो सकता है वे रीडर वाले इंटरव्यू बोर्ड में बैठें।"

विभाग में ज्यादातर नये लेक्चरर जो दिन में दो बजे आते और विभाग से दूसरे की डाक उठाकर चुपचाप चले जाते, वे सारे लोग आज सुबह दस बजे से ही आने शुरू हो गए थे। भवेश पांडेय के आसपास जमा ये लोग उनके मफलर और टोपी और सुन्दर स्वास्थ्य के बारे में बातें कर रहे थे। भवेश पाण्डेय उस समय आचार्य चूड़ामणि के हार्ट अटैक, इंटरव्यू का घोषित होना आदि कई ईश्वरीय चमत्कारों पर अभिभूत गुरुगंभीर मुद्रा बना कर खड़े थे। रीडर के प्रत्याशी एक लेक्चरर ने कहा- "गुरुदेव! आपने एम.ए. में जो कामायनी की व्याख्या पढ़ायी थी वह तो आज तक नहीं भूलती।"

पांडेय जी मुस्कराये - "अरे भाई! मैं तो बीस सालों से उद्धव शतक ही पढ़ा रहा हूँ।"

लोग हँस पड़े।

"पन्द्रह दिन से सूरज नहीं निकला" - पांडेय जी ने मौसम पर टिप्पणी की - "डीन सिनहा जी के घर जाना है" - अपने भविष्य से आशंकित वह सड़क की ओर देख रहे थे - "आजकल ठंड के मारे रिक्शे भी नहीं निकलते।"

कामर्स विभाग के सामने दो लड़कियाँ रिक्शे से उतर रही थीं – "हम अभी रिक्शा ला रहे हैं सर!" चपरासी रामदीन हाथ बाँधे देख रहा है, तीन लेक्चरर रिक्शे वाले को बुलाने के लिए दौड़ पड़े।

ठीक उसी समय क्लर्क शर्मा जी ने चहककर इशारा किया – "उधर सामने रिक्शा आ रहा है।"

सब लोगों ने देखा, धोती और कुर्ता। कुर्ते पर बंद गले की कोट। सिर पर फर की टोपी और कन्धे पर कश्मीरी शाल। आचार्य चूड़ामणि रिक्शे पर चले आ रहे थे। अब तक जो लोग पाण्डेय जी को घेरकर खड़े थे उनकी सिट्टी-पिट्टी गुम हो गयी। किसी को बहुत जोर की पेशाब लगी तो किसी को ऊपर विभाग में काम पड़ गया। जो तीन लेक्चरर कामर्स विभाग की ओर गये थे, वे रिक्शे वाले को वहीं छोड़कर कैफेटेरिया में घुस गये। मैदान में अकेले खड़े रह गये भवेश पाण्डेय। बाघ के सामने सहमी नीलगाय। वह रिक्शे पर बैठे आचार्य को देख रहे थे। जैसे कोई कालपुरुष चला आ रहा हो।

– "क्या बात है पाण्डेय जी!" चूड़ामणि ने रिक्शे से उतरते हुए पूछा, "आप लोग क्लास छोड़कर यहाँ खड़े हैं?"

"आपका स्वास्थ्य कैसा है सर?" पाण्डेय जी ने पूछा और सफाई दी, "डीन सिनहा जी ने सारे विभागाध्यक्षों की मीटिंग बुला रखी है। वहीं जा रहा था। आप नहीं थे सर, मुझे बहुत चिन्ता थी।"

"सिनहा को और कोई काम नहीं रह गया है। बैठे-बैठे राजनीति छांटता है। आपको वहाँ जाना है। जाइये, अपना क्लास लीजिये!" चूड़ामणि जी ने हिकारत से कहा – "क्या मवेशीखाना बना रखा है विभाग को।" उन्होंने शर्मा जी को बुलाकर कहा, "वहाँ से लड़कों को हटाइये और कहिये, अपने-अपने क्लास में जायें।"

"और सुनिये, आप डीन ऑफिस चले जाइये। मीटिंग का एजेन्डा ले

आइये। और बता दीजिएगा कि यहाँ सबकी व्यस्तताएँ हैं। समय पूछकर मीटिंग रखा करें।"

"सर, सुना है कि इंटरव्यू होने वाला है" – शर्मा ने बताया। जैसे सुस्वादु भोजन के बीच दाँतों में काई कंकड़ फंस जाय। सारा जायका खराब। बुरा सा मुँह बनाकर चूड़ामणि जी ने शर्मा को देखा – "कैसा इंटरव्यू!"

"सर! यहाँ सारे अध्यापक सुबह से ही पाण्डेय जी को घेर रखे हैं। हफ्ते भर से कोई क्लास नहीं। सुना है डीन ने पाण्डेय जी को प्रोफेसर और विभागाध्यक्ष बनाने का आश्वासन दे रखा है।" – शर्मा विभाग में आचार्य चुड़ामणि जी का खास आदमी है।

तब तक एक लड़का आया। उसके साथ विश्वविद्यालय छात्र संघ के भूतपूर्व अध्यक्ष और अब आर.एस.एस. के प्रान्तीय संयोजक समर सिंह भी थे। दोनों ने आचार्य का चरण स्पर्श किया। "कहिये, संगठन का काम कैसा चल रहा है?" आचार्य ने पूछा।

"वहाँ तो ठीक है सर! लेकिन आप लोगों ने कम्युनिस्ट, वह भी नक्सलाइट प्रत्याशी को जीत जाने दिया?" समर सिंह ने चिन्ता जाहिर की।

"तो क्या करते! यहाँ बाभन जिता देते? हम बचे रहेंगे तभी विचारधाराएँ रहेंगी।" – चूड़ामणि जी ने उनकी बात को कोई तवज्जो न देते हुए पूछा – "कहिये, कोई काम है?"

"सर! इनका पी.एच.डी. में रजिस्ट्रेशन कराना है।" समर सिंह ने साथ वाले लड़के की ओर इशारा किया।

"आपने और किसी से बात नहीं की?" आचार्य रजिस्ट्रेशन फार्म को पढ़ रहे थे – विषय, 'हिन्दी कवियों का औषधि ज्ञान।'

"इस विषय का क्या मतलब?" – उन्होंने लड़के से पूछा।

"सर, आयुर्वेद विभाग में शोध के लिए 'स्कालरशिप' है। आप चाहेंगे तो मिल जायेगी।" लड़का मुस्करा रहा था।

"होशियार लग रहे हो, क्या नाम है।"

"प्रताप सिंह सर!"

"सिंह!" आचार्य ने देखा – छह फुट का शरीर। स्वास्थ्य अच्छा है। मुस्कराये – "कुर्मी तो नहीं हो?"

"नहीं सर! खाँटी बलिया का हूँ।"

आचार्य ने फार्म पर हस्ताक्षर कर दिये।

ऊपर विभागाध्यक्ष का कमरा झाड़-पोंछकर साफ कर दिया गया। आचार्य चूड़ामणि ने उन लोगों को विदा किया और ऊपर जाकर कुर्सी पर बैठे। "सिंहपीठ पर सिंह ही शोभा देता है" क्लर्क शर्मा जी डाक लेकर आ गये थे और बता रहे थे- "पाण्डेय तो इस पर बैठकर चारों ओर नाचता और लिबिर-लिबिर करता है।"

"शर्मा जी, आपको कुछ पता है इंटरव्यू की तारीख क्या है?... और सुनिये, पहले दरवाजा बंद कीजिए।" – आचार्य ने आज्ञा दी।

भीतर ही भीतर मन्त्रणा हुई। उन्होंने किसी को फोन किया। इंटरव्यू से दो दिन पहले 'स्टे आर्डर' के लिए आश्वस्त हो गए। शर्मा जी उन्हें मुग्ध नायिका की तरह देखकर मुस्कराये। आचार्य का ठहाका गूँज उठा। बाहर कुछ अध्यापक कान रोपे रेंगे रहे थे। कमरे से निकल रहे शर्मा जी को उन्होंने दण्डवत किया।

"आचार्य की तबीयत कैसी है शर्मा जी?"

कोढ़ में खाज। जाड़े में बारिश। माहौल गरम है। कान और मुँह मफलर से बाँधे प्रेत अपनी-अपनी कब्रों से बाहर निकल आये हैं। सुबोध मिसिर ने महसूस किया कि जिन वामपन्थियों से उनका हुक्का-पानी बंद था, उनसे भी नमस्कार-बंदगी होने लगी हैं। फिजाएँ रंग बदल रही हैं। हवाओं में हिन्दी विभाग का इंटरव्यू गूँज

रहा हैं सहअस्तित्व और समागम के इस दौर में वे आचार्य तक पहुँचने की मजबूत सीढ़ी बन सकते हैं। वामपंथी विचारों वाले रायसाहब के साढ़ू की मौसी के बड़े वाले दामाद की छोटी वाली बिटिया उसी गाँव में ब्याही गयी है जहाँ डीन सिनहा जी की ननिहाल है। वे उधर से आश्वस्त हैं। लेकिन इस चूड़ामणि का कोई भरोसा नहीं। जाति पहली शर्त है लेकिन सुबोध मिसिर को तो दत्तक पुत्र की तरह मानता है। अब अपना काम तो प्रयास करना है। वे सुबोध मिसिर को बता रहे थे – "आप ध्यान दें तो पायेंगे कि हमारी भारतीय संस्कृति में वाद-विवाद की लम्बी परम्परा रही है, आचार्यों का अपने शिष्यों तक से वाद-विवाद होता रहा है। गार्गी और याज्ञवल्क्य की परम्परा वाले इस देश ने विरोधी विचारों को व्यक्तिगत हित-अहित, लाभ-हानि, जीवन-मरण से ऊपर उठकर सम्मान दिया है। अब देखिये तो एक तरह से यह पूरा विभाग आचार्य जी का ही पाला-पोसा हुआ है। उनके सोचने का अपना ढंग है। और मैं तो कहता हूं कि उसकी एक बहुत लम्बी और समृद्ध परम्परा रही है। जहाँ तक उनके निजी व्यक्तित्व का प्रश्न है तो मैं तो हमेशा से कहता रहा हूँ..." – इस इंटरव्यू में राय साहब का भतीजा लेक्चरर और वे खुद रीडर पद के प्रत्याशी हैं। – "अच्छा तो मैं चल रहा हूँ" उन्होंने सुबोध मिसिर से कहा – "आप उनके खास और योग्य विद्यार्थी हैं। अरे भाई, अब तक आपको अपनी थीसिस पूरी कर लेनी चाहिए थी। खैर, अभी तो जो लोग रीडर हो जायेंगे, उनकी और कई जगहें खाली होंगी आप गुरुदेव को मेरा प्रणाम कह दीजिएगा।"

नीचीबाग के चौधरी प्रकाशन से चले आ रहे उपाध्याय जी ने अपनी खटारा सायकिल पर पैंडिल मारते हुए सोचा कि यह तो रिक्शे से भी भारी चल रही है। विभाग तक पहुँचने में पसीने-पसीने हो रहे थे। साँस दमा के मरीज की तरह चल रही है। जाते हुए राय साहब को देखकर उन्होंने भद्दी सी गाली दी और सुबोध मिसिर के पास रुककर बोले- "एक तो भुइंहार, दूसरे जनवादी। का कह रहा था हो सुबोध? अभी कल तक तो चूड़ामणि जी को गाली देता था। क्लास

में लड़कों से कहता था कि उपन्यास के विकास में प्रेमचंद और यशपाल के साथ गुलशन नन्दा और राणू का नाम लिख रखा है भुइंहारी छाँटता है। ससुर कुछ तुम भी तो लिखो! कि बस मुक्तिबोध का गू चाटते रहोगे।" उन्होंने घुणा से थूका और मतलब की बात करने लगे- 'सन्त साहित्य का सामाजिक योगदान' मेरी पुस्तक परसों तक छपकर आ जायेगी और कातर हँसी हँसते हुए बताने लगे- "सारा पैसा मकान बनवाने में लग गया था। बहू का मंगलसूत्र पाँच हजार में बेचकर यह किताब छपवा रहा हूँ। चिन्ता के मारे नींद नहीं आती। तीन रात जागकर सोचता रहा। आज जाकर फाइनल किया। मैंने यह पुस्तक आचार्य जी की पत्नी को समर्पित कर दिया है। आगे भगवान की मर्जी। प्रकाशक साले तो लूट रहे हैं। कागज और छपाई का सारा पैसा देना पड़ा है।"

शान्तिकाल के बीस वर्षों में इस विभाग से सिर्फ तीन पुस्तकों का प्रकाशन हुआ था। इंटरव्यू घोषित होने के बाद से यह पैंतालीसवीं पुस्तक की सूचना थी। जनार्दन प्रसाद ने अपने कई शेयर जल्दी-जल्दी बेचे। एन.एस.सी. की रकम भुनायी। वे प्रोफेसर पद के प्रत्याशी हैं। ऐसा सुना जाता है कि उनके मकान के भीतर एक बहुत बड़ा हाल है। जहाँ अकसर उनके स्टूडेंट्स दूसरे विश्वविद्यालयों से आयी कापियाँ जाँचते रहते हैं, वहीं बैठकर आजकल पाँच विद्यार्थी रात-दिन पुस्तकें तैयार कर रहे हैं। पुस्तकालय की किताबों के पन्ने नोच-नोच कर भारतीय काव्यशास्त्र, समकालीन साहित्य की भूमिका, रीतिकाल का कलात्मक योगदान, आदि-आदि ग्रन्थ तैयार किये जा रहे हैं।

कबीरपन्थी गुह्यसाधना और उलटबाँसी के मर्मज्ञ रीडर आचार्य महादेव मुनि ने देखा कि पशुचिकित्सालय के गर्भाधान केंद्र पर भीड़ लगी है। बनियान और तहमत लपेटे एक हट्टा-कट्टा आदमी गाय के नवजात बछड़े का कान पकड़े, पुचकारता चला जा रहा है। उन्होंने आँखों पर जोर लगाकर देखा-लग रहा है रमकरना है। दोनों में ननद और भौजाई का रिश्ता। उन्होंने पुकार लगायी-"पड़वे के साथ कहाँ जा रहे हो?"

सुबह-सुबह बहिर बकलोल ने टोका। कैसे बीतेगा पूरा दिन? उन्होंने जवाब दिया- "कान तो पहले ही गायब था। अंधे भी हो गये क्या? ससुर बछड़े को पड़वा बोल रहे हो?"

"मैं तुमसे नहीं, बछड़े से पूछ रहा हूँ" - कबीरपन्थी आचार्य ने रामकरन से कहा।

दोनों एक-दूसरे के करीब आये। अविश्वास और घृणा एक-दूसरे के कान में मुँह सटाकर फुसफुसाती रही, "अरे भाई, डीन तुम्हारी बिरादरी का है। कहना, एक्सपर्ट को साधे रहे। वरना यह चूड़ामणि टिकने न देगा।"

दोनों ने एक-दूसरे को भरपूर तोला। अंदाजा, सुना और सूँघा। फिर अलग-अलग दिशाओं में थोड़ी दूर आगे जाकर गुम हो गये। चारों ओर प्रेम और घृणा, संशय और अविश्वास की मनोरम छटा फैल रही थी।

लेक्चरर जैन साहब! रिटायर होने में सिर्फ छह महीने बाकी हैं। इस बार भी कोई उम्मीद दिखायी नहीं दे रही है। चेहरे पर माँछी भिनक रही है। निरीह आँखों से हिन्दी विभाग को देखते हुए उन्होंने आह भरी - "कैसा जमाना आ गया। विश्वविद्यालय में प्रोफेसर रह ही नहीं गये। सब जगह सिर्फ ठाकुर, भूमिहार, ब्राह्मण और लाला हैं।"

"कैसा ठाकुर, ब्राह्मण, गुरुदेव! - सुबोध मिसिर ने कहा - "मैं तो पाँच साल से यहाँ लोगों को देख रहा हूँ और मैं जब भी देखता हूँ, हर बार मुझे अपने गाँव का देसराज नाई याद आने लगता है।"

सुबोध मिसिर पान की दुकान पर खड़े होकर खैनी मल रहे थे तभी उन्हें कुछ शोर और पकड़ो-पकड़ो की आवाज सुनायी पड़ी। हिन्दी विभाग के सामने प्राध्यापकों और छात्रों की भीड़ थी। लग रहा है कोई साइकिल चोर पकड़ा गया है- और ठीक उसी समय उन्होंने देखा कि भीड़ के बीच से गुरुदेव शिवपाल मिश्र भागे जा रहे हैं। पीछे एक हट्टा-कट्टा दारोगा उन्हें दौड़ा रहा है- "पकड़ो! पकड़ो!!" गुरुदेव के पैर में जूता भी नहीं है। कोट के सारे बटन नुच गये हैं।

बाँह फटकर झूल रही है। वे सरपट भागे जा रहे हैं। विश्वविद्यालय का विशाल फाटक उन्होंने एक लंबी छलाँग से पार किया और शहर की भीड़ में, जहाँ सिनेमा के टिकट ब्लैक हो रहे थे, और जहाँ पायल और घुंघरू के उदास अफसाने लाटरी के टिकट बेच रहे थे, जाकर खो गये।

"भाग गया हरामी का पिल्ला" - दारोगा हाथ में डंडा लिये पान की दुकान की ओर आ रहा था।

"क्या इन्होंने किसी लड़की के साथ कुछ किया है?" एक जिज्ञासु भीड़ दारोगा के आसपास घिरने लगी थी।

"प्राध्यापक लोग तो यह सब करते ही रहते हैं। मुझे इन सब बातों के लिए फुर्सत नहीं।" दारोगा हाँफ रहा था।

"फिर क्या हुआ?" किसी ने पूछा।

"कानपुर स्टेशन पर गिरहकटी करता था। किसी की मार्कसीटें और डिग्रियाँ हाथ लग गयीं। सत्रह साल से उन्हीं के भरोसे यहाँ नौकरी कर रहा है। हद है भाई! विश्वविद्यालय है कि चंडूखाना! रंडियाँ भी ग्राहक का मुँह सूँघकर सौदा करती है।" - दारोगा छात्रों और प्राध्यापकों को हिकारत से देख रहा था, "कैसे यहाँ पढ़ने वाले हैं। और 'कुलिगुस' लोग क्या भूसा खाते हैं?"

"उसके अण्डर में शोध कर चुके पचासों छात्रों का क्या होगा? वे तो दूसरे विश्वविद्यालयों में नौकरी कर रहे हैं" - किसी ने उत्सुकता प्रकट की।

"अब इस बात में कोई मजा नहीं।" भीड़ दारोगा के आसपास से छँटने लगी।

"लीजिए, अब इसी बात पर पान खाइये!" दुकानदार ने पान का गोल बीड़ा थमाते हुए शर्मा जी को बधाई दी। "मिश्रा मैदान से बाहर हो गया। अब आपका रीडर बनना कोई नहीं रोक सकता।"

शर्मा का साढ़ू 'विजिलेंस' में नौकरी करता है। लग रहा है मामले को

उभारने में इसी का हाथ है। लोगों ने कानाफूसी शुरू की - "अपने स्वार्थ के लिए लोग किस हद तक जा सकते हैं! यहाँ किसी पर भरोसा नहीं।" त्रिपाठी जी ने टिप्पणी की, "अभी कल तक ये दोनों गलबहियाँ डाले पूरे विभाग को गाली देते थे।"

तेरह दिन हो गये। सूरज नहीं निकला। शाम होते ही सारा शहर घने कोहरे की सफेद चादर ओढ़कर उकडूँ पड़ा सो जाता। लंबी और सुनसान रात। कौन रो रहा है? शायद कोई किशोर विधवा है! लेकिन इतनी मर्मान्तक वेदना! जरूर कोई वृद्ध विधुर होगा। स्ट्रीट लाइटों के मद्धिम प्रकाश में कंबल ओढ़े कोई छायाकृति चली जा रही है। किसी स्कूटर की सरसराह पास आती और फिर दूसरे छोर के अँधेरे में जाकर विलीन हो जाती। अपने रिटायरमेंट से ऊबे वृद्ध और जर्जर प्रोफेसरों की भी पूछ बढ़ गयी है। रात दो-दो बजे तक सन्धियों, समझौतों और षड्यन्त्रों का दौर जारी है। मिठाइयों का भाव बढ़ गया हैं ऐसे प्रचण्ड सन्नाटे में भी दुकानें खुली हैं। जिन्होंने अपने बच्चों को टॉफी की जगह भेली और गुड़ खिलाकर पाला-पोसा था, वे भी इकट्ठे तीन-तीन, चार-चार किलो के अलग-अलग पैकेट बँधवा रहे हैं। "जल्दी करना भाई, सड़क पर स्कूटर स्टार्ट खड़ा है।" -मुनिन्दर राय ने दुकानदार से कहा।

उनके चले जाने के बाद एक आदमी ने दुकानदार से पूछा, "बहुत बड़े आदमी हैं क्या?"

दुकानदार मुस्कराया, "आजकल विश्वविद्यालय में इंटरव्यू चल रहा है। बिक्री बढ़ गयी है।"

सृष्टि में सत्य इतना मनोहारी, रंग-बिरंगा और मौजूँ कभी नहीं रहा होगा। सुबोध मिसिर आजकल पुस्तकालय नहीं जाते। सुबह से उठकर दिन भर सत्य की तलाश में घूमा करते हैं। वह उन्हें चौराहों, नुक्कड़ों, चाय और पान की दुकानों पर, हिन्दी विभाग में जगह-जगह दिखायी देता रहता।

ये प्रोफेसर लोग खाते क्या हैं? आज यही जानने के लिए वे मचल पड़े। वह

जानना चाहते थे कि आखिर कौन सा अन्न है जिसने इनकी वासनाओं को प्रचण्ड और जननेन्द्रियों को निष्क्रिय कर दिया है? वह पूरे दिन भूखे-प्यासे टहलते रहे। शायद इस रहस्य को पार पाना मेरे लिए दुर्लभ है। यह सोचते हुए थककर वह नुक्कड़ वाली दुकान पर चाय पीने चले गये। तभी अचानक उन्होंने देखा कि मुख्य सड़क की नजर से दूर जो चोरगलियाँ हैं उनमें कुछ लोग सिर पर बोझा लादे दबे-पिचके कतारबद्ध चुपचाप चले जा रहे हैं। वे चौंक पड़े। बहुत पहले 'टाम काका की कुटिया' में इनकी शक्लें दिखायी दी थीं। लेकिन इनके चेहरे तो परिचित हैं। ये अपने ही विश्वविद्यालय के शोधछात्र हैं। विज्ञान और मानविकी की विभिन्न शाखाओं-प्रशाखाओं के शोधक। हॉस्टलों में रहते हैं। अपने गाँव-जवार के होनहार। घर के दुलरुवा। जब ये यहाँ पढ़ने आते हैं तो इनके बाप अटैची और आचार सिर पर लादकर इन्हें स्टेशन तक छोड़ने आते हैं। खेत गिरवी रखकर इनके सुख-सुविधाओं को पाला-पोसा जाता है। आखिर इस तरह ये लोग कहाँ जा रहे हैं? - सुबोध मिसिर ने सोचा। लड़खड़ाकर गिर पड़े एक लड़के को उन्होंने दौड़कर पकड़ा। सहारा देकर उठाया और पूछा, "इस बोरे में क्या है भाई? कहीं तुम तस्करी तो नहीं करने लगे?"

लड़के ने कहा, "गुरुदेव की भैंस ब्यायी है। उसी के लिए पुराना, गुड़ और चोकर ले जा रहा हूँ।"

"और तुम?" - उन्होंने दूसरे से पूछा।

"पहाड़िया सट्टी से कुम्हड़ा और लौकी खरीदकर ले जा रहा हूँ। गुरुजी ने कहा है कि वहाँ सस्ती और ताजी सब्जियाँ मिलती हैं"

तीसरे ने बिना रुके बताया कि, "गुरुजी का मकान बन रहा है। उसी के लिए सीमेंट है।" बोझ से पिचके सिर का सारा रक्त चेहरे पर उतर आया था। आँखे बाहर लटक आयी थीं। वे उसी तरह सिर झुकाये चुपचाप आगे बढ़ गये। सुबोध मिसिर की आँखें डबडबा गयीं। वह खूब जोर से हँस पड़े।

इंटरव्यू में दो दिन रह गया है, जब साँस रोके प्रतीक्षा कर रहे हैं। उधर

कोने में झाड़ी की आड़ लेकर गेस्टहाउस का चपरासी वामपन्थी रायसाहब से फुसफसा रहा है, "तीन कमरे बुक हैं। कोई गुजरात के मिसिर जी हैं और राजस्थान के उपाध्याय जी। एक पंजाब के, पता नहीं कैसी 'टाइटिल' है। जाति पता नहीं चल रही है।"

राय साहब ने अनुमान लगाया और सिर हिलाते हुए एकालाप की मुद्रा में बुदबुदाने लगे - "वाम, वाम, वाम दिशा, समय साम्यवादी।"

"तब तो आपके लिए शुभ है" - चपरासी ने दिलासा दिया।

"खाक शुभ है! मूल सत्य तो दूसरा है" - वे चिन्ता में आरपार हो रहे थे - वह एक और मन रहा राम का जो न थका। कुछ बुदबुदाहट उभरी - "कहती थी माता मुझे सदा राजीव नयन।" चाहे जो भी हो, यू.पी. कालेज वाले मास्टर साहब मुझे वामपंथी मानते हैं। जाति भेद से परे। आज के युग में ऐसा आदमी मिलना मुश्किल है। बहुत दिनों से एकान्तवास कर रहे हैं। हालचाल लेना चाहिए - "अच्छा तो भाई, बहुत-बहुत धन्यवाद" - उन्होंने चपरासी से कहा और स्कूटर की किक मारी - फुर्रऽऽ।

इधर आचार्य चूड़ामणि धोती, कुर्ता और बंद गले की कोट पर शाल डाले चले आ रहे हैं। पान की दुकान, सड़क पर यहाँ-वहाँ धूप के छोटे-छोटे टुकडों में बँटे समस्त प्राध्यापकगण हिन्दी विभाग के सामने आकर दण्डवत मुद्रा में विनत भाव से झुक गये। भय और आशंका से भरे स्वयंवर के समस्त राजगण। आचार्य चूड़ामणि के कृपाकांक्षी। कौन कहा है कि चर्च और पोप का युग खत्म हो गया है!

सब वामपन्थियों का फितूर है। कम्यूनिस्टों के देश में तो व्यक्तिगत स्वतंत्रता होती ही नहीं। आखिर में दासवृत्ति का पालन भी तो हमारी व्यक्तिगत स्वतंत्रता है।

आचार्य ने देखा, भविष्य की पौध लहलहा रही है। श्री विकास पाण्डेय, उपाध्याय, डॉ. त्रिपाठी, जनार्दन प्रसाद, रीडर महादेवमुनि और रामकरन राय।

सबके सब उपस्थित हैं। कुछ पारभृता सुनयना सुकुमारियाँ भी। श्रद्धा और समर्पण का महोत्सव। उनके होंठों पर रहस्यमयी मुस्कान तैर रही थी, "कितने पैसे हुआ जी?" उतरते हुए उन्होंने रिक्शे वाले से पूछा।

"साहब, जो मर्जी हो दे दीजिए" - ठंड से काँप रहे उस बूढ़े ने चिथड़े कम्बल को लपेटते हुए कहा।

"सर, मेरे पास चेंज है" - वर्षों से लइया और भुने चने का स्वल्पाहार करने वाले मुनिन्दर राय रिक्शे की ओर बढ़े।

"नहीं, नहीं! यह गलत बात है" - आचार्य ने उन्हें सख्ती से रोका और पचास पैसे का एक सिक्का रिक्शे वाले को दे दिया।

"साहब, पाँच रुपया होता है" - रिक्शा वाला गिड़गिड़ाया, "किसी से पूछ लीजिये।"

आश्चर्य में डूबा समवेत स्वर, "पाँच रुपया!! लूटते हैं साले! भाग भोसड़ी के, दिखाई न देना!!" भोंऽऽ भोंऽ हुवांऽ हुवांऽऽ

रिक्शा वाला गिरते-पड़ते भागा।

आचार्य सामने पत्थर के बेंच पर खड़े हो गये। "मैं आप लोगों से कुछ कहना चाहता हूँ" - उन्होंने सामने झुके सिरों को सम्बोधित किया, "लेकिन, अगर आप लोगों को मुझ पर भरोसा हो तो..."

दो दिन बाद इंटरव्यू है। किसमें इतनी जुर्रत। फिर वही समवेत स्वर, "हमें आपके न्यायबोध पर पूरा भरोसा है आचार्य।"

दो मिनट तक सन्नाटा रहा। विभाग के हेड क्लर्क शर्मा जी ने बैग से कागज का एक टुकड़ा निकालकर उन्हें थमाया। चपरासी रामदीन अध्यापकों के पीछे खड़ा हो गया।

वहाँ 'जनगण मन' हो रहा है क्या भाई! सड़क पर घूम रहे लड़के भी आकर खड़े हो गये।

"आप तो साक्षात न्यायमूर्ति हैं सर!" फिर वही समवेत स्वर गूँजा।

"तो आप लोग सुनें! मुझे इस बात की बहुत शिकायत है कि यहाँ कोई क्लास नहीं लेता। दूसरी बात यह कि आप लोग पेट्रोल और मिठाइयों पर बहुत ज्यादा पैसा फूँकते हैं। थोड़ा मितव्ययिता से काम लें। लेकिन, साथ ही मुझे इस बात की बहुत खुशी है कि इधर मेरे विभाग ने समूचे हिन्दी जगत से ज्यादा पुस्तकें लिखी हैं। लोगों में पढ़ने-लिखने की रुचि बढ़ रही है। यह अच्छी बात है। बस यही कामना है कि आप लोग बनारस और इलाहाबाद के प्रकाशकों से थोड़ा ऊपर उठें। स्तर बढ़ायें। और हाँ! इलाहाबाद के ही संदर्भ में एक जरूरी बात याद आ गयी। यह देखिये..." उनके हाथ में कागज का एक टुकड़ा लहरा रहा था, "यह इलाहाबाद हाईकोर्ट का 'स्टे आर्डर' है। इंटरव्यू स्थगित किया जा रहा है।" - और वे जल्दी से सीढ़ियाँ चढ़ते हुए ऊपर अपने कमरे में चले गये।

"अरे यह क्या हो रहा है! उपाध्याय जी के मुँह से झाग क्यों निकल रहा है? आँखें उलट गयीं। मिर्गी का दौरा है! जूता सुँघावो!!" चारों ओर खलबली मच गयी। जनार्दन प्रसाद ने मन्दी के दिनों में शेयर बेचकर किताबें छपायी थीं। सत्यानाश! गुड़ गोबर!! "पकड़ो साले को! भागने न पाये!" - ललकारते हुए रामकरन राय आचार्य चूड़ामणि के पीछे-पीछे लपके।

जम्मू, चण्डीगढ़, दिल्ली और लखनऊ। चार-चार विश्वविद्यालयों से आयी थीसिसों का मौखिकी लेना है। हवाई यात्रा का टिकट पहले से बुक है। चूड़ामणि जी ने पन्द्रह दिन की ड्यूटी लीव ली। टैक्सी पकड़कर सीधे बाबतपुर पहुँच गए।

इसी बीच आचार्य के इकलौते श्रवणकुमार के एम.एम. अंतिम वर्ष का रिजल्ट आया। पिछले सारे आचार्य पुत्रों का रिकार्ड ध्वस्त करता हुआ वह अस्सी प्रतिशत अंक पाया। अध्यापक संघ की आपात बैठक में जनार्दन प्रसाद राँड़ औरतों की तरह विलाप कर रहे थे - "यह आदमी शुरू से ही अध्यापक विरोधी रहा है। अब उसके लड़के का अस्सी प्रतिशत अंक!" अध्यापक संघ के तीनों

प्रत्याशी ब्राह्मण हैं – “अगर फिर भी आप लोग कुछ नहीं करेंगे तो मैं आमरण अनशन पर बैठूँगा।”

“हम करना तो बहुत कुछ चाहते हैं” – अध्यक्ष महोदय चिन्तित और असमंजस में हैं – “लेकिन इसमें क्या किया जा सकता है? मामला कोर्ट का है।”

“क्यों नहीं कर सकते! हिन्दी में कहीं अस्सी प्रतिशत” अंक आते हैं? रामकरन राय चीख रहे थे – “इसी अपने पुत्र के लिए इस आदमी ने बारह साल से ये जगहें रोक रखी है। लड़का तीन साल इंटर में फेल हुआ।”

अध्यापक संघ के अध्यक्ष मिश्रा जी की बहु इसी साल इतिहास में पचासी प्रतिशत अंक पा चुकी हैं। उन्होंने सभा के सामने हाथ जोड़कर अनुरोध किया – “हम लोगों को शोभा नहीं देता कि आपस के झगड़े में बहू-बेटियों या पुत्रों को घसीटें।”

कुलपति ने डीन सिनहा जी को बुलाकर पूछा कि अचानक यह सब कैसे हो गया?

“मैं कुछ नहीं कर सकता सर!” डीन ने असमर्थता प्रकट की, “यह आदमी बहुत जालिया है।”

“अच्छा आप ऐसा करें कि उनके आते ही मेरे साथ मीटिंग रखें। मैं नोटिस टाइप करा दे रहा हूँ। लड़कों का प्रतिनिधिमंडल रोज-रोज ज्ञापन दे रहा है। जिन्दाबाद, मुर्दाबाद हो रहा हैं कोर्ट के मामले में तो कुछ नहीं हो सकता, लेकिन यह अस्सी प्रतिशत वाली बात पूछकर आप कार्रवाई करें।” – वी.सी. न्यायप्रिय छवि वाले सख्त व्यक्ति हैं।

हवाई यात्रा की थकान थी। फिर भी कुलपति का पत्र पाते ही आचार्य उनसे मिलने गये। डीन सिनहा जी वहाँ पहले से मौजूद थे। थोड़ी देर तक फाइलों को पलटते रहने के बाद वी.सी. ने औपचारिक शुरूआत की, “आपकी यात्रा कैसी रही आचार्य जी?”

“ठीक थी सर!” – आचार्य चूड़ामणि दाँत खोद रहे थे– “दिल्ली गया था। सोचा यू.जी.सी. भी हो लूँ, आपके ‘एक्सटेंशन’ की बात चल रही थी सर!”

“हाँ भाई, दिल्ली के मारे तो मैं भी बहुत परेशान हूँ। यहाँ के एम.पी. त्रिपाठी जी ने संसद में क्या तो प्रश्न पूछा है कि आपके लड़के को हिन्दी में अस्सी प्रतिशत अंक मिले हैं। सब लोग जाँच कराने की बात कर रहे हैं। यहाँ लड़के भी रोज जुलूस लेकर आते रहते हैं।” – वाइस चांसलर ने सीधे-सीधे बात शुरू की।

चूड़ामणि जी मुस्कराये, “धरना-प्रदर्शन ही तो हमारा जनतंत्र है सर!”

“अस्सी प्रतिशत अंक हिन्दी में!” – डीन सिनहा जी ने सख्त एतराज जताया – “सुना है, वह प्रवीयस में सेकेण्ड डिवीजन पास था।” उन्होंने वी.सी. से मुखतिब होकर कहा – “सर! एम.पी. त्रिपाठी जी ने लोकसभा में कहा है कि रामचन्द्र शुक्ल को भी इतने नम्बर नहीं मिले थे। पूरे देश में विश्वविद्यालय की छीछालेदर हो रही है सर!”

वी.सी. तक तो सही है! यह डीन बहुत गटर-पटर बोल रहा है- आचार्य ने सोचा और मुस्कराये, “देखिये सिनहा जी, आप भूमिहार हैं...”

उनका वाक्य पूरा होने से पहले ही डीन उछल पड़ा, “आप यहाँ जाति-बिरादरी की बात क्यों उठा रहे हैं।”

“आप पहले शान्त होकर मेरी पूरी बात सुनें! और चीखना-चिल्लाना मुझे भी आता है” – गुस्से में चूड़ामणि जी के दोनों नथने मरकहे बैल की तरह फड़कने लगते –हुःहुः– “क्योंकि यह मूल सत्य है कि आप भूमिहार हैं। इस धरने-प्रदर्शन में आधे लड़के भूमिहार, आधे ब्राह्मण और दो-चार कम्युनिस्ट हैं। मुझे अच्छी तरह मालूम है कि ये लड़के धरने से पहले और उसके बाद आपके घर क्या करने जाते हैं! रही बात त्रिपाठी एम.पी. की, तो वह निरा बेवकूफ है। हिन्दी की इतनी पवित्र संस्था का नाश उन्हीं दोनों भाइयों ने किया है। उस गधे

को यह भी नहीं मालूम कि आचार्य शुक्ल इण्टर फेल थे। उनका एम.ए. में अस्सी प्रतिशत अंक कैसे आयेगा?"

यह आदमी तो एकदम बेलगाम है, वी.सी. ने सोचा-इस पर कार्रवाई करनी जरूरी है-और बोला- "आप विश्वविद्यालय में जातिवाद की राजनीति करते हैं। सुना है, अध्यापकों पर हुए हमले में भी आपका हाथ है" - वी.सी. का लहजा बेहद तल्ख और सख्त था।

आचार्य के सामने आज तक किसी ने इस अंदाज में बात करने की जुर्रत नहीं की थी। वह कुछ क्षण तक शान्त होकर कुलपति के चेहरे की और देखते रहे और फिर मुस्कराते हुए ठण्डे स्वर में बोले, "आपने और क्या-क्या सुना है मेरे बारे में? लोग तो बहुत कुछ कहते हैं। आपके पहले भी एक कुलपति थे। जूते की माला पहनकर गये थे यहाँ से। लोग चुगलखोर हैं। कहते हैं, कि वह सब मैंने ही किया-किराया था। जबकि बात बस इतनी थी कि प्राचीन वाङ्मय, वैदिक साहित्य और भारतीय संस्कृति के बारे में मेरी आस्थाएँ उनसे मेल नहीं खाती थीं।"

कुलपति ने देखा, अनेक किंवदन्तियों और क्षेपक कथाओं से मिथक बन चुके महानायक आचार्य चूड़ामणि मुस्करा रहे थे, भय से उसका चेहरा पीला पड़ गया। आचार्य को दया आ गयी, बोले, "वी.सी. साहब, मैं आपका बहुत आदर करता हूँ। बावजूद इसके कि मैं हिन्दी विभाग का अध्यक्ष हूँ। 'डीन ऑफ स्टूडेंट्स' भी हूं। और आपने बिना मुझे विश्वास में लिये हिन्दी विभाग का इंटरव्यू 'फिक्स' कर दिया था। मैं जानता हूँ कि आप अत्यंत शालीन, मितभाषी और न्यायप्रिय व्यक्ति हैं और यह भी जानता हूँ कि मानव संसाधन मंत्रालय का मुख्य सचिव आपका साढू है। लेकिन क्या बात है कि यहाँ इस बनारस विश्वविद्यालय में आज तक कोई राजपूत वी.सी. नहीं हो सका है। मैं जातिवाद को देश के लिए कैंसर से कम घातक नहीं मानता। आप चाहें तो जाँच आयोग बैठा दें। लेकिन किसी परीक्षक की जाँची कापी को कोई न्यायाधीश कैसे जाँच सकता है? जनतंत्र में

अलग-अलग संस्थाओं की अपनी स्वायत्तता, हैसियत और गरिमा होती है। आपको कोई ऐसा काम नहीं करना चाहिए कि यह पवित्रता नष्ट हो। किसी को यह कहने का अवसर मिले कि आप बाह्मण और भूमिहार लॉबी के दबाव में हैं। आगे आपकी जैसी मर्जी।" - कहकर आचार्य चूड़ामणि अचानक उठे और वी.सी. लॉज से बाहर निकल गये।

बाहर चारों और रेलमपेल था। धरना, प्रदर्शन और अनशन करने की धमकी। उस दिन दोपहर को जब सुबोध मिसिर कैफेटेरिया से चावल और कुम्हड़े की तरकारी खाकर चले जा रहे थे, उन्होंने देखा कि कृषि विज्ञान संकाय वाले चौराहे पर एक लड़का फटा कुर्ता, पाजामा और हवाई चप्पल पहने उजबक की तरह चारों तरफ देख रहा है। विशालकाय इमारतों और एक-दूसरे को काटती आगे चली जा रही चिकनी, चौड़ी सड़कें। सड़कों के ऊपर झुक आये आम, अमलताश, शीशम और सागौन के पेड़ों की घनी छाँव में शायद वह रास्ता भूल गया है। सामने से अध्यापक संघ का विशाल जुलूस चला आ रहा था। वे लोग पता नहीं किस बात पर बेहद उग्र और उत्तेजित थे। लड़का दोनों हाथ उठाकर उन्हें रोकना चाहता है। जब वे लोग नहीं रुकते तो वह दोनों हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाने लगता है, "गुरुजनों, बस इतना ही याद है कि मैं बारह साल पहले यहाँ आया था। मैं कहाँ का रहने वाला हूं? मुझे अपने गाँव का नाम और बाप की शक्ल भूल चुकी है। मैं भूखा हूँ। कई दिनों से मुझे अन्न का एक दाना भी नहीं मिला है। यह देखिये... उसने कुर्ता उठाया और अपना पेट दिखाने लगा। वहाँ कागज के कुछ मैले-कुचैले टुकड़े बंधे थे - ये मेरी मार्कसीटें हैं। चरित्र प्रमाण पत्र है। मैं भूखा हूं और अपने गाँव जाना चाहता हूँ गुरुजनों, मुझे मेरे गाँव का रास्ता बता दीजिये, वहाँ मेरी माँ खाना बनाकर खोज रही है।" वह चीख रहा था। भीड़ उसे कुचलते हुए आगे बढ़ गयी। किसी ने उसका कुर्ता नोच लिया - यह घर में पोंछा लगाने के काम आयेगा।

चौराहे के दूसरी और से छात्र संघ का जुलूस चला आ रहा था। वह लड़का

सड़क के बगल की नाली में गिर पड़ा था। अचानक उसे फिर कुछ आवाज सुनायी पड़ी तो दौड़कर आया ओर सड़क पर दुबारा खड़ा हो गया। कुर्ता गायब था। चप्पल का फीता टूटकर दूर कहीं छिटक गया था। लेकिन वह दोनों हाथों से अपने पेट पर बँधे कागजों को कसकर पकड़े था। "भाइयों रुकिये।" - वह फिर चीखने लगा - "मुझे मेरे घर का पता बता दीजिए। वहाँ जाड़े की गुनगुनी धूप में दीवार के सहारे बैठी मेरी पत्नी नये धान का चावल पछोरती थी। मेरे बाप ने बचपन में ही मेरी शादी कर दी थी। अब मेरा बेटा बड़ा हो गया है और मुझे बुला रहा है। मैं उसे देखना चाहता हूँ।" जुलूस में लड़के अपनी ही धुन में नारे लगाते, बहुत गुस्से में न जाने किसे, शायद खुद को ही गालियाँ देते उसे लँगड़ी मारकर आगे बढ़ गये।

सुबोध मिसिर ने लड़के को देखा। उन्हें लगा कि यह कोई स्वप्न है। जैसे स्वप्न में कोई अपने को अपने से थोड़ा दूर खड़ा होकर देखता है ठीक उसी तरह। उन्हें दया आयी। वे उसे पकड़कर कुछ पूछना और बातें करना चाहते थे। उन्हें अपनी ओर आता देखकर वह लड़का बहुत तेज भागा और जाकर विश्वविद्यालय के सबसे ऊँचे गुम्बद पर चढ़ गया।

सुबोध मिसिर ने देखा, गुम्बद के ऊपर जो त्रिशूल चमक रहा है उसी पर मजे से बैठा वह लड़का बानर की तरह उछल-कूद कर रहा है। सूरज तप रहा था। सुबोध मिसिर ने जोर से पूछा, "तुम क्या चाहते हो भाई? मैं तुम्हें तुम्हारे गाँव पहुँचा दूँगा। मुझे तुम्हारे घर का पता मालूम है।"

लड़के ने कहा, "लेकिन अब वहाँ मुझे कोई नहीं पहचानता। क्योंकि मैं भी किसी को नहीं पहचान पाता। वहाँ जाकर मैं क्या करूँगा?"

"तो फिर तुम क्या चाहते हो? सुबोध ने पूछा।"

"बताऊँ?" लड़का बहुत जोर से हँसा। "मैं ताजमहल में अपनी प्रेमिका के साथ एक पूरी रात हनीमून मनाना चाहता हूँ। पता नहीं कहाँ चली गयी मेरी प्रेमिका? क्या तुम मुझे मेरी प्रेमिका से मिला दोगे? क्या तुमने अभी तक ताजमहल भी नहीं देखा है? ....अच्छा तो सुनो! मैं अपने बेटे के साथ नादिरशाह के सामने खूब जोर से हँसना चाहता हूँ। मेरे बेटे का कैरमबोर्ड नादिरशाह चुरा ले गया। अच्छा तुम गाँधी जी को बुला दो। वे उसे अपने खड़ाऊँ से मारेंगे।"

सुबोध मिसिर किंकर्तव्यविमूढ़ उसे देख रहे थे।

"खैर तुम जाओ!" उसने वहीं से चिल्लाकर कहा, "मैं अब यहीं रहूँगा। इसी त्रिशूल पर। मुझे यह ऊँचाई अच्छी लग रही है।"

एक दिन लोगों ने देखा कि एक बहुत बड़े देश के राजा ने उसी आदमखोर मिसाइल के गले में विजयहार पहना दिया, जिसे वहाँ के वाशिन्दों ने बर्फीली हवाओं में भूखे प्यासे सारी-सारी रात जागकर आधी शताब्दी से रोक रखा था। पूरी दुनिया तमाशबीन की तरह यह दृश्य देखकर भौंचक रह गयी। एक डरावनी और काफी गुफा की तरह मुँह बाये वह आदमखोर मिसाइल एक नगर से दूसरे नगर, एक देश से दूसरे देश तक घूमने लगी। उसने लोगों के सपने, जीने का अंदाज और जरूरतों की फेहरिश्त बदल दी। दिन, महीने और वर्ष बीतते रहे। समय गुजरता रहा। युग बदला। इस तरह बदला कि जो लोग निरन्तर रात-दिन उसे बदलने के लिए बेचैन रहते थे वे भी दुःख और शोक से भर गये। इसी बीच सुबोध मिसिर की थीसिस पूरी हुई। वे डॉक्टर सुबोध मिसिर हो गये।

एक दिन सुबह-सुबह वे कैंटीन के सामने चाय पी रहे थे। उन्होंने देखा कि आसपास बैठे लड़के रात टी.वी. पर रोमांचक मैच के बारे में उत्तेजक बहसें कर रहे हैं। सामने सड़क पर एक जवान और सुन्दर लड़की नशे की सी हालत में लंगड़ाती और सहमी हुई सी भागी चली जा रही थी। पता लगा कि वह गुजरात से अपने प्रेमी के साथ बनारस घूमने आयी थी। तीन दिन से भूखे-प्यासे छात्रावास के एक कमरे में बंद करके पाँच लड़कों ने उसके साथ निरंतर 'रेप' किया था। निष्प्राण घटनाओं और सनसनीखेज सूचनाओं का यह रीतिकाल था। थोड़ी दूर

आगे मात्र दस कदम की दूरी पर एक छोटा का कम्प्यूटर रखा हुआ था। किसी दूर उपग्रह से संचालित। कम्प्यूटर का शेष पिछला हिस्सा अँधेरे में डूबा हुआ था। तेज लाइट में चमकते स्क्रीन पर उस समय एक लड़की मुस्करा रही थी-किसी सुदूर अतीत या पौराणिक आख्यानों में चमकती लड़की की हँसी-एक तिलस्मी करामात की तरह उसके चारों और लहरा रही थीं चमकीली पैकिंगे। उनमें भरा था मिस यूनीवर्स का गोपन रहस्य, मादक पेय, क्रीम और बच्चों की चाकलेटें, औरतों के सिन्दरू, मित्रों की शुभकामनाएँ, नये साल का संदेश और भूसा और गोबर। अपनी जरूरतों से ऊबे लोगों की भीड़ एक जादुई कुतूहल से बेकाबू उस लड़की के उन्नत उरोजों और चिकनी जाँघों में धँसी चली जा रही थी। उस समय नशे की सी हालत में लंगड़ाती भागती लड़की के होंठ भय से काले पड़ गये थे। वह कम्प्यूटर के पिछले हिस्से में, जहाँ गाढ़ा अँधेरा फैला हुआ था, जाकर विलीन हो गयी। उसकी आखिरी चीख एक सुरीली और लयात्मक पींऽऽ-पींऽऽ के साथ स्क्रीन पर दो सेकेण्ड तक उभरकर बंद हो गयी। वहाँ रात के मैच का शेष भाग फिर शुरू हो गया।

आचार्य चूड़ामणि जी विभाग से रिटायर होने के दो महीने बाद दूसरे विश्वविद्यालय में कुलपति बना दिये गये। उनका इकलौता श्रवणकुमार, बकौल सारे शहर जिसे एक वाक्य शुद्ध हिन्दी लिखनी नहीं आती थी वह, मरुधर विश्वविद्यालय के फाटक से होता हुआ पाँच साल बाद उसी हिन्दी विभाग में रीडर बना दिया गया। उत्तराधिकार के इस महोत्सव में विश्वविद्यालय की राजपूत लॉबी ने उसका अभिनन्दन किया। इस नियुक्ति के समय भी सिनहा जी डीन थे। भूमिहार लॉबी ने बहुत कोशिश की लेकिन उन्होंने आचार्य चूड़ामणि से अपने सम्बन्धों को जातिगत रागद्वेष से ऊपर उठकर देखा। उन्होंने गंभीरतापूर्वक इस बात पर विचार किया कि इकलौते पुत्र का वृद्ध पिता के पास रहना ही जरूरी है। इस नियुक्ति के ठीक एक महीने बाद आचार्य चूड़ामणि ने यह सोचकर कि किसी का कर्ज लेकर मरना राजपूती आनबान के खिलाफ

है, उन्होंने अपने विश्वविद्यालय में डीन सिनहा जी की पुत्रवधू को अंग्रेजी में लेक्चरर बना दिया।

अपने गुरु के योग्य शिष्य सुबोध मिसिर नगर में दर-दर भटकते रहे। वे रात के अँधेरे में बैठकर नीतिवाक्य लिखा करते। उनके साथ के सारे छात्र, जिनसे उनकी नोक-झोंक चला करती थी, जो उन्हें यथास्थितिवादी कहकर क्रान्ति और परिवर्तन की बात किया करते थे, वे सबके सब एक-एक कर विश्वविद्यालयों, डिग्री कॉलेजों और अखबार के दफ्तरों में जाकर चूड़ामणि जी का जूठन बटोर रहे थे। इधर सुबोध मिसिर विश्वविद्यालय के नये लड़कों के बीच अजूबे बनते जा रहे थे। वह सबसे कहा करते कि विरोध में उठा एक हाथ, पक्ष में उठे करोड़ों हाथ से महत्वपूर्ण होता हैं वे इस विरोध की व्याख्या नहीं करते थे और अकसर चुप लगा जाते। आचार्य जी हर पन्द्रहवें दिन बाद किसी न किसी नियुक्ति में एक्सपर्ट होते। हर बार वे दृढ़ प्रतिज्ञ होकर जाते कि इस बार अपने प्रिय शिष्य सुबोध मिसिर की नियुक्ति जरूर कर देंगे। लेकिन उनके मानवीय दायित्व बोध और न्यायोचित चेतना को किसी मंत्री, विधायक, किसी भूतपूर्व विभागाध्यक्ष या समकालीन प्रोफेसर का सिफारिशी पत्र हर बार पथभ्रष्ट कर देता। वे रोज-रोज पथभ्रष्ट होते रहे। एक दिन अपनी पुत्रवधू की नियुक्ति के लिए दिल्ली की एक महिला प्रोफेसर के पैरों पर गिर पड़े। नियुक्ति नहीं हुई। लोगों को उनके इस अपमान की उम्मीद नहीं थी। सबको लगा कि कहीं अबकी बार गंभीर हार्ट अटैक न हो जाय। लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। उनके दरबार में लोगों की आमद खत्म हो गयी। वे बिना बुलाये शहर और विश्वविद्यालय की हर सभाओं, समारोहों में पहुँचकर अपने को मंच पर बुलाये जाने की प्रतीक्षा किया करते और ऊँघने लगते। गोष्ठी, समारोह खत्म हो जाते। वे चुपचाप अकेले टहलते हुए अपने घर चले आते।

इधर गाँव में सुबोध मिसिर की बेटियाँ बड़ी हो रही थीं। पत्नी के दाँत हिलने लगे थे। हर फसल कटने के बाद खेती पर पानी, बिजली और लगान के कुछ

कर्जे बढ़ जाते। उन्होंने एक पर एक तीन एकड़ खेत बेच डाले। अंत में गाँव के एक बुजुर्ग ने समझाया कि "भाई सुबोध, कब तक नौकरी खोजते रहोगे? यह खेत तुम्हारी कमाई नहीं हैं जो बेचे जा रहे हो। कल लड़कियों की शादी करनी पड़ेगी।"

तीन दिन से भूखे-प्यासे सुबोध मिसिर ने एक दिन अन्तिम रूप से गुरुदेव के चौखट पर मत्था टेका। "बेटे सुबोध, मुझसे तुम्हारी दशा देखी नहीं जाती" - गुरुदेव ने कहा और रोने लगे।

"कोई बात नहीं गुरुदेव! मैं कुछ माँगने नहीं, आज्ञा लेने आया था। घर जा रहा हूँ" - उन्होंने शहर के बीचोंबीच थूका और गाँव चले गये।

पाँच साल से गाँव में रहते हुए सुबोध मिसिर को सिर्फ यूरिया का दाम, बिजली के बिल, गेहूँ, धान और ईख का भाव याद रह गया था। अलंकार, छन्दशास्त्र, रस यहाँ तक कि तुक और विचार आदि की मर्यादा तोड़ता हिंदी कविता का प्रवाह आधुनिकता, मार्क्सवाद और अस्तित्ववाद आदि को अप्रासंगिक करार देता हुआ इन दिनों उत्तर-आधुनिकता और विखण्डनवाद के समीक्षा सिद्धान्तों से अपनी संगति बिठाने का जोड़तोड़ कर रहा था। सुबोध मिसिर ने सुना कि आज पूरा विश्व एक गाँव बनकर रह गया हैं संचार माध्यमों की अचूक पकड़ से कोई व्यक्ति बाहर नहीं है। वे यह सब सुना करते और देखते कि सैकड़ों सुरक्षा गार्डो के बीच प्रधानमंत्री मांस के निर्जीव लोथड़ों में बिखर जाता है। हजारों जासूसी कुत्ते पाँच साल से हत्यारे की छाया सूँघते घूम रहे हैं। अजीबोगरीब विरोधाभासों और विडम्बना का दौर जारी है। पुरातत्व विभाग के संग्रहालय और अजायबघर की दीवारों पर कालिदास, भवभूति, सूर, तुलसी और कबीर की पाण्डुलिपियाँ मरे शेरों की खाल की तरह टँगी हैं। शब्द अप्रासंगिक हो गये हैं। कविता और इतिहास का अंत हो गया हैं यह सब सुबोध मिसिर अखबारों में पढ़ रहे थे और देख रहे थे कि यहाँ गाँव में अब भी औरतें शादी, समारोह में, छठ और मुण्डन के अवसर पर उसी तरफ फटी साड़ियाँ और

लुगदी पेटीकोट लपेटे गीत गाये जा रहे हैं। ठण्ड में काँपते-ठिठुरते धरने और प्रदर्शन पर जाते हुए लोग कबीर के निर्गुण और तुलसी की चौपाइयाँ सुन-सुना रहे हैं। नारे लगा रहे हैं। वह अकसर सोचा करते कि संचार माध्यमों ने जिस दुनिया को एक गाँव में बदल दिया है उस गाँव के नक्शे में यहाँ की औरतें और लोगों की कोई सूरत और जरूरत क्यों नहीं दिखायी देती? कुएँ में गिरे बैल को निकालने वे लोग क्यों नहीं आते जो मुँह में भोंपा बाँधकर हमें अपने गाँव का वाशिन्दा बताते हुए रोज-रोज चीख रहे हैं एक दिन उन्होंने देखा कि एक मजदूर नेता की, जो लोककथाओं की तरह प्यारा और खूबसूरत था, एक उद्योगपति और शराब के ठेकेदार ने मिलकर हत्या कर दी। आज उसी उद्योगपति ने हिन्दी का सबसे बड़ा पुरस्कार सबसे बड़े जनवादी और मानवतावादी साहित्यकार को दिया है। फ्लैश चमक रहे हैं। फोटो खींचे जा रहे हैं। विचार, आदर्श और नैतिकता बेमानी। यहीं है उत्तर आधुनिकता का खूबसूरत माडल। एक युवा मजदूर की विधवा ने जिस सहायता राशि पर थूक दिया उसी के सूद से हिन्दी का सबसे बड़ा पुरस्कार सबसे बड़ा जनवादी साहित्यकार ले रहा है। बेशर्मी की हद है।

ठीक इन्हीं दिनों उन्हें पंजाब के एक विश्वविद्यालय से लेक्चररशिप का इंटरव्यू देने के लिए एक रजिस्ट्री पत्र आया था। तीन दिन पहले। आज जब वे खेत से आकर बैलों को भूसा-दाना करने का रहे थे तभी उनकी बड़ी वाली बेटी ने उन्हें एक दूसरा पोस्टकार्ड दिया।

यह आचार्य चूड़ामणि का पोस्टकार्ड था। गुरुदेव मुझे अब भी भूले नहीं हैं-यह सोचकर ही सुबोध मिसिर की आँखे छलछला गयीं। कुशलता की कामना के साथ गुरुदेव ने लिखा है कि "अगर तुम्हें फुर्सत हो तो यहाँ चले आओ। पंजाब की यात्रा करनी है। बूढ़ा हो गया हूँ। अकेले यात्रा संभव नहीं है। और अब यहाँ कोई इतना विश्वसनीय नहीं जिसके भरोसे इतनी दूर जाया जा सके।"

वही तारीख! वही जगह! लग रहा है इस इंटरव्यू में गुरुदेव ही एक्सपर्ट हैं

– सुबोध मिसिर खुशी से करीब-करीब काँपने लगे- शायद अब मेरे दुःखों का अंत होने वाला है। ठीक पन्द्रह दिन बाद उन्होंने रामधारी साहु से हजार रुपये उधार लिये और गुरुदेव के चौखट पर हाजिर हो गये।

सुबोध ने देखा, अपने घर के बाहरी हिस्से में, जहाँ कभी गाड़ी खड़ी रहती थी वहीं एक टूटी और धँसी चारपाई पर गुरुदेव मैली-कुचैली सी चीकट रजाई ओढ़कर बैठे हैं। जगह-जगह से फटी बेडशीट नीचे तक झूल रही है। सर्दी का मौसम था। गुरुमाता चारपाई पर पाताने सिकुड़कर बैठी थीं। एक गठरी हो चुकी गुरुमाता। जब सुबोध वहाँ पहुँचे तो गुरुदेव के चेहरे पर हल्की और थकी मुस्कराहट फैल गयी। उन्होंने कोने में रखे पुराने स्टूल की ओर इशारा करके बैठने के लिए कहा। "गुरुदेव आप यहाँ?" – सुबोध ने जगह-जगह से फटी दीवारों वाले गैरजे में लावारिश की तरह पड़े गुरुदेव को देखकर आश्चर्य और करुणा से भरकर पूछा। दीवारों और छत पर वर्षों पुराने मकड़ी के जाले लटक रहे थे। चारों और गंदगी थी।

"हाँ, अब मेरे लिए यही जगह उपयुक्त है। उत्तराधिकार सौंप देने के बाद राजा के लिए जंगलवास ही उचित रहा है।" – बोलते हुए चूड़ामणि जी के शब्द, जो कभी नाभि की ओंऽम ध्वनि की तरह थरथराते हुए निकलते थे, आज जैसे आँखों से भीगकर रेंग रहे थे। पंख फड़फड़ाने की कोशिश में गौरैया के बच्चों की तरह मुँह के बल गिर-गिर जा रहे गुरुदेव के शब्द- "इधर अब थोड़ा एकान्त रहता है" – उन्होंने कहा।

घुटनों में मुँह ढाँपे गुरुआइन अचानक फफक पड़ीं, "बहू उधर जाने नहीं देती। बेटा मउगा है। बात-बेबात झिड़कता रहता है। अब तुम्हारे बाबूजी गठिया के मारे चल नहीं पाते। दो मील पैदल जाकर होमियोपैथ की दवा लाती हूँ। दिन भर के लिए आधा किलो दूध! बेटा, तुमने तो देखा ही है! पांच-पांच किलो दूध का चाय बनाती रही हूँ। आज बूढ़ापे में अपनी थाली अपने हाथ धोओ! गिनी हुई रोटियाँ और मुट्ठी भर चावल!"

"चुप रहो भागमान।" – आचार्य ने पत्नी को संतोष दिलाया और पूछा, "बेटे सुबोध! तुम कैसे हो? घर में बाल-बच्चे? और बहू कैसी है?"

"सब ठीक है गुरुदेव। लेकिन आप यहाँ! और इस तरह?"

"नहीं, मुझे कोई तकलीफ नहीं है। पत्नी अपनी आदत से लाचार है। बहू से नहीं पटती। खैर छोड़ो! मुझे यहाँ बहुत सुख है।"

सुबोध ने देखा था वह दिन-कालीन के चारों तरफ बिछी कुर्सियाँ। स्वयं तख्त के मोटे गद्दे पर मसनद के सहारे अधलेटे आचार्य चूड़ामणि का व्यक्तित्व। हिन्दी जगह का यह प्रचण्ड सूरमा शत्रु शिविर में ऐरावत की तरह, अपने सामने डीन, वाइस चांसलर या अन्त्री-मन्त्री किसी को कुछ नहीं समझता था। सूर पंचशती समारोह का विराट समागम! देश के कोने-कोने से आये मार्क्सवादी सौन्दर्यशास्त्र से लेकर संरचनावादी समीक्षा सिद्धान्तों के पचासों विद्वान, सबके बीच दिप-दिप करता आचार्य का अपना प्रभामण्डल! सभी उनके सामने दण्डवत थे। किसी को थीसियों का परीक्षक बनना था तो किसी को अपनी किताब पाठ्यक्रम समिति से पास करानी थी। किसी को बहू की नियुक्ति चाहिए, तो किसी को यू.जी.सी. की ग्रान्ट। आज वही गुरुदेव लावारिस की तरह अपने ही घर के एक कोने में खो गये-सुबोध मिसिर भौंचक थे।

"अच्छा तुम ऐसा करो कि मुमुक्ष भवन में जाकर ठहर जाओ"- आचार्य ने कहा – "कल सुबह पंजाब मेल से अंबाला तक का रिजर्वेशन है। वहाँ से बस की यात्रा करनी पड़ेगी।"

"गुरुदेव! मैंने भी उस जगह के लिए आवेदन किया था।" सुबोध ने बताया, "मेरा भी इंटरव्यू लेटर आया है। क्या आपको मालूम है कि दूसरे कौन-कौन एक्सपर्ट हैं?"

अब तक आचार्य जी के मुखमंडल पर शिष्यत्व की जो ममता झलक रही थी अचानक यह सुनते ही कर्तव्यपराणता के बोझ से दबकर कठोर रुख बदलने

लगी। स्वर मद्धिम हो गया। बोले, “चलो, यह तो बहुत ही अच्छा है। लेकिन तुम यह बात यहाँ किसी से बताना मत। मुझे तुम्हारी बहुत चिंता है।”

गुरुआइन ने कहा, “अब इन्हें कौन पूछता है बेटा! पहले सब लोग यहीं माथा रगड़ते थे। अब इसी शहर में आकर चुप-चुप चले जाते हैं। अगर गोहत्या का भय न हो तो लोग बुढ़े बैल को गोली मार दें।”

लखनऊ से अम्बाला तक की यात्रा आचार्य ने सोकर पूरी की। दूसरे सारे मुसाफिर उनकी नाक की घर्र-घर्र और खाँसी के मारे ऊब-ऊब कर करवट बदलते रहे। आँखों के अलावा गुरुदेव के सारे अंगछिद्र मिनट-मिनट पर विस्फोट कर रहे थे। श्रद्धा अतीन्द्रिय नहीं होती। खुद सुबोध को भी दिक्कत हो रही थी।

अम्बाला से बस का सफर करते हुए गुरुदेव सुबोध से हिसाब-किताब लेते रहे। खेती में कितना फायदा हो जाता है। “हम लोग बचपन में चने का होला खाकर ईख चूस लेते थे। पेट भर जाता था। शहरों में तो बहुत प्रदूषण और मिलावट बढ़ गयी है। एक तो बिजली नहीं आती दूसरे बिल बहुत देना पड़ता हैं ‘महिशं च शरद् चन्द्र चन्द्रिका धवलं दधिः’। कालिदास ने लिखा है - शरद कालीन चन्द्रमा की चाँदनी की तरह भैंस की सुन्दर सजाव दही! पढ़कर लार टपकने लगती। यह सब गाँव में ही सम्भव है। शुद्ध हवा और बे-मिलावट भोजन।”

“लेकिन गुरुदेव, गाँव तो नरक हो चुके हैं। खेती की हर फसल किसानों को कर्ज में डुबोकर चली जाती है। दो जून के भोजन के अलावा अब वहाँ कुछ भी नहीं है।”

“यह तुम्हारा भ्रम है सुबोध! शहरों के लिए तुम्हारा आकर्षण ठीक है, लेकिन गाँवों के प्रति तुम्हारे विचार अच्छे नहीं है।”

सुबोध ने सोचा- क्यों नहीं आप गाँवों में चले जाते। कौन आपको रोके है। लेकिन गुरुदेव की बात। वे चुप लगाये रहे।

उतरने वाले स्टेशन के थोड़ा पहले ही चूड़ामणि जी ने सुबोध को हिदायत दी, “तुम पीछे से उतरकर दूसरी ओर चले जाना। वरना, कोई तुम्हें मेरे साथ देख लेगा तो पक्षपात का आरोप लगेगा। लोगे कहेंगे कि ‘कैंडिडेट’ लेकर आये हैं।”

सुबोध ने कहा, “जैसी इच्छा गुरुदेव!”

इंटरव्यू बोर्ड में दिल्ली के एक प्रचंड वामपन्थी थे और दूसरे राजस्थान के वाममार्गी। तीसरे स्वयं आचार्य चूड़ामणि, जिनके पुत्र को अभी बनारस विश्वविद्यालय में प्रोफेसर बनना था। सुबोध मिसिर ने इंटरव्यू बोर्ड में बैठे आचार्य को देखा। निर्वीय पौरुष की समस्त वासना निरीह आँखें में दीन याचना बनकर चुपचाप बैठी थी। वामपंथी आचार्य ने उनसे अलंकार और रीति की सामाजिक और साहित्यिक महत्व पूछा। राजस्थान के वामामार्गी नाथ सम्प्रदायी आचार्य ने भाषा विज्ञान का ‘ग्रिम नियम’।

सुबोध मिसिर सवालों का जवाब ठीक से नहीं दे पाये। इंटरव्यू खराब हो गया। इसलिए नहीं कि पिछले कई सालों से उनकी पढ़ायी-लिखायी नहीं हो सकी थी, बल्कि इसलिए कि इंटरव्यू का अच्छा या बुरा होना अंततः और एकमात्र एक्सपर्ट पर ही निर्भर करता है। अब उन्हें अपने गुरुदेव आचार्य चूड़ामणि से ही अंतिम उम्मीद थी।

“तुमने तो मेरी सारी उम्मीद पर ही पानी फेर दिया।”- बाहर निकलकर आचार्य चूड़ामणि ने बताया।

“नियुक्ति किसकी हुई गुरुदेव?” बस अड्डे की ओर लौटते हुए सुबोध मिसिर ने बहुत धीमे और रुआँसे स्वर में पूछा।

रात हो रही है। चौड़ी और चिकनी सड़कों के दोनों ओर नियान लाइटों और हाइलोजन के पीले प्रकाश में जलपरी की तरह तैरती-भागती कारें। खिलखिलाती लड़कियाँ। समूचा शहर एक नशीले संगीत की लय पर थिरक रहा था। उनका प्रश्न डूब गया था। किसी अदृश्य लोक की स्वप्न सुन्दरी ने अपने

वैभव का पारदर्शी नीला आँचल बाजारों के ऊपर फैला दिया था। पैदल चलते हुए आगे-आगे गुरुदेव और पीछे सुबोध मिसिर। वह अपने गाँव के रामधारी साहु से उधार लिये एक हजार रुपये, अपनी पत्नी और जवान होती बेटियों के बारे में सोच रहे थे। कहाँ से चुकायेंगे यह एक हजार रुपया। उनका दिल डूब रहा था। गुरुदेव ने बताया, "रजिस्ट्रार की पुत्रवधू की नियुक्ति हुई है। सब कुछ पहले से तय था। कहने को लोग वामपंथी बनते है, लेकिन प्रोफेसरों की एक ही जाति होती है और एक ही विचारधारा। कौन उन्हें परीक्षक बनाकर हवाई जहाज का किराया दे सकता है! बस। मैंने बहुत दुनिया देखी है। बनारस विश्वविद्यालय में प्रोफेसर की नियुक्ति होने वाली है। शायद यही एक्सपर्ट होकर आयें। इसलिए मैं चुप लगा गया। किसी तरह श्रवण कुमार प्रोफेसर हो जाता।"

अम्बाला कैंट तक पहुँचने में रात के नौ बज गये थे। गाड़ी अभी चार घंटे लेट थी। "ए.सी. और फर्स्ट क्लस में मैंने बहुत यात्राएँ की हैं। ऊब और एकान्त अब सहा नहीं जाता। देखों, सेकेण्ड क्लास में रिजर्वेशन मिल पाता है या नहीं?" आचार्य ने सुबोध से कहा, "तुम टी.टी. को बता देना कि बनारस विश्वविद्यालय में प्रोफेसर हैं।"

कुर्ते के नीचे मारकीन की बनियान। बनियान के भीतर चोरथैली। रामधारी साहु की बनियान की तरह आचार्य की बनियान में भी चोरथैली। ए.सी. का किराया मिला है। लेकिन गुरुदेव ने चोरथैली से निकालकर सौ-सौ के दो नोट सुबोध को थमाये, "सेकेण्ड क्लास का टिकट ले लेना।"

"अभी गाड़ी आने में बहुत देर है" चूड़ामणि जी ने सुबोध से कहा, "यहाँ से तीन किलोमीटर दूर तक देवी का मन्दिर है, एकदम निर्जन स्थान में। कहा जाता है कि सच्चे मन से वहाँ माँगी गयी हर मन्नत पूरी हो जाती है। मुझे तुम्हारी भी बहुत चिन्ता रहती है सुबोध!"

शायद गुरुदेव मेरे लिए सोच रहे हैं। अगर कोई गुरु देवी के सामने जाकर

सच्चे मन से अपने शिष्य के लिए मन्नत माँगे तो समूचे ब्रह्माण्ड में इससे पवित्र प्रार्थना और क्या हो सकती है? - सुबोध ने सोचा।

अँधेरी रात है। निर्जन स्थान। रिक्शा तो मिलेगा नहीं। "लेकिन कोई बात नहीं गुरुदेव! गाँव का रहने वाला हूँ। बोझा ढोने की आदत है। ईख और ज्वार के बड़े-बड़े बोझ खेत से लेकर आता हूं। तीन किलोमीटर कोई दूरी नहीं है!" - सुबोध ने कहा और गुरुदेव का भारी होल्डाल और अटैची सिर पर लादकर चल पड़े। अपना झोला उन्होंने गले में लटका लिया। - "आप बस रास्ता बताते जाइए गुरुदेव!"

एक किलोमीटर बाद शहर खत्म हो गया। मुख्य सड़क से हटकर खेतों के बीच एक पगडंडी। दो किलोमीटर और चलना है- गुरुदेव ने कहा, "पता नहीं क्यों मुझे आज बहुत डर लग रहा है।"

गहरी अँधेरी रात थी। सिर पर भारी होल्डाल, अटैची और गले में झोला लटकाये आगे-आगे सुबोध मिसिर और पीछे-पीछे अब भूतपूर्व हो चुके बनारस विश्वविद्यालय के अभूतपूर्व आचार्य चूड़ामणि। उनके पैर बार-बार धोती में फँसकर उलझ जा रहे थे। जाड़े का मौसम था। तेज बर्फीली हवा चल रही थी। "लग रहा है शिमला में बर्फ गिरी है। इस साल ठण्ड बहुत पड़ेगी।" - कंबल को कसकर शरीर पर लपेटते हुए आचार्य ने कहा।

"मुझे तो पसीना हो रहा है गुरुदेव!" - सुबोध मिसिर की काँपती आवाज होल्डाल के भारी वजन से दबी जा रही थी।

"गाँव का आदमी श्रम करता रहता है। कर्मवीर और सच्चा प्रकृति पुत्र। इसीलिए निरोग रहता है। पता नहीं क्यों आजकल लोग शहरों की ओर भाग रहे हैं। मुझे तो गाँव बहुत अच्छे लगते हैं। रिश्तों की आदिम गंध में डूबे गाँव। शहर में तो कोई किसी को पहचानता ही नहीं। चारों ओर मतलब और स्वार्थ!" - गुरुदेव ने कहा।

बस, बस यही सामने। चारों ओर ईख और धान के कटे खेत। सन्नाटे में डूबा छोटा सा मन्दिर। तेलियों के बटखरे की तरह काली और बेढब सी गुप्तकलीन पत्थर की मुर्ति। न कोई तराश ना भव्यता। आचार्य ने आँखे बंद कीं और श्रद्धा से हाथ जोड़ा। "विदेशों में यह करोड़ों की बिकेगी। सरकार को सुरक्षा का इंतजाम करना चाहिए" - गुरुदेव ने चिंता जतायी और बताया, "हल जोतते समय खेत के भीतर मिली थी यह मूर्ति।"

गांव में तो कोई इसका पाँच रुपया भी ना देगा- सुबोध ने आश्चर्य से गुरुदेव को देखा।

"पहले तुम अपने लिए कुछ माँग लो!" आचार्य ने कहा - "लेकिन पूरे मन से तन्मय होकर। स्पष्ट उच्चारण के साथ।"

सुबोध हाथ जोड़कर खड़े हो गये, "माँ, मुझे नौकरी चाहिए! हाई स्कूल, इण्टरमीडिएट से लेकर बी.ए., एम.ए. किसी भी कक्षा में पढ़ा सकता हूँ। मुझे पढ़ाने की नौकरी चाहिए माँ! मैं गुरु ऋण से उऋण होना चाहता हूँ। सरस्वती का कलंक सिर पर लादे, मैं अपनी समूची आस्था के साथ तुमसे पापमुक्ति की प्रार्थना कर रहा हूँ। मुझे गाँव के अँधेरे नर्क से निकालकर चाहे जहाँ कहीं भेज दो। मैं वहाँ नहीं रहना चाहता। सारा गाँव मेरी पढ़ायी-लिखायी पर हँसता है।"

काली अँधेरी रात। निस्तब्ध सन्नाटा। सुबोध प्रार्थना कर रहे थे। उनके एक-एक शब्द, जैसे चिता में आत्मदाह करती किसी विधवा की चीख आग की लपटों में छटपटा रही हो। उनकी आँखों से आँसू छलछला आये थे।

उसके बाद आचार्य चूड़ामणि जी मूर्ति के सामने उपस्थित हुए। सुबोध ने सोचा, जो कुछ कसर रह गयी होगी मेरे माँगने के ढंग में, उसे गुरुदेव जरूर पूरा कर देंगे। वे चूड़ामणि जी के ठीक पीछे निश्चल भाव से खड़े हो गये। भावमग्न।

आचार्य ने पहले हाथ जोड़ा और फिर आँखें मूँद लीं। तीन-चार लम्बी-लम्बी साँसें खींची। प्रणायाम की दीर्घ साधना में उन्होंने शब्द को नाभि तक खींचकर

थरथराते मन्द्र स्वर में पहले ओऽम का उच्चारण किया। फिर हाथ को माँ के पैरों पर टेक कर जमीन पर लेट गये। थोड़ी देर तक एकदम शान्त। अचानक उनके गले से रोने की आवाज फूटी। सुबोध ने देखा, दुनिया का सबसे दुःखी आदमी माँ के पैरों पर गिरा पड़ा है। करुण हिचकियों में गुरुदेव के शब्द डूब-उतरा रहे थे, "माँ, मेरे बेटे को प्रोफेसर बना देना। हाँ माँ प्रोफेसर! समूचा हिन्दी जगह मेरे उपकार के बोझ से दबा है। लेकिन मुझे अब किसी पर भरोसा नहीं रह गया। मेरा दुर्दिन जानकर मेरे ऊपर दया करो माँ!"

यह क्या कह रहे हैं गुरुदेव! - सुबोध मिसिर थरथर काँप रहे थे। कृतध्नता का यह चरम रूप देखकर वे किंकर्तव्यविमूढ़ हो गये।

"अच्छा तो गुरुदेव, प्रणाम! - मैं जा रहा हूं।"

आचार्य ने सुना और लेटे-लेटे पीठ के बल उलट गये, "मुझे इस तरह यहाँ अकेले छोड़कर सुबोध?" उन्होंने याचना के से स्वर में पूछा।

"हाँ! इसी तरह। इसी अँधेरे में। यहीं पड़-पड़े रोते रहें।"सुबोध के हाथ में एक हल्का सा झोला था। वे उसे उँगलियों में नचाते, गुब्बारे की तरह हवा में लहराते चले जा रहे थे।

अचानक उन्हें अपने पीछे किसी की हिचकियाँ और रोने की आवाज सुनायी दी। उन्होंने मुड़कर देखा। उन्होंने देखा कि सिर पर भारी होल्डाल और अटैची लादे आचार्य चूड़ामणि भागते-भागते गिरते-पड़ते चले आ रहे हैं।

(कथादेश, मार्च 1998)

✷ ——————— ✷

देवेन्द्र

कथाकार देवेन्द्र का जन्म जनवरी 1958 को गाजीपुर जिले के पिपनार गांव में हुआ। यूं देवेन्द्र ने कहानी लिखने की शुरूआत तो नवें दशक के अंतिम दौर

में कर दी थी और अपनी शुरूआती कहानी 'शहर कोतवाल की कविता' से ही अपनी पहचान बना ली थी, लेकिन वे महत्वपूर्ण कहानीकार के रूप में प्रतिष्ठित हुए अंतिम दशक में। देवेन्द्र ने कम कहानियां लिखीं, लेकिन लगभग सभी महत्वपूर्ण। कहानी संग्रह अभी तक एक ही है - 'शहर कोतवाल की कविता'। समीक्षा की भी एक पुस्तक है- 'नक्सलवाड़ी आन्दोलन ओर समकालीन हिन्दी कविता'। पुरस्कार दो हैं - 'इन्दु शर्मा कथा पुरस्कार' (1996) और 'उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान' का यशपाल कथा सम्मान (1998)।

सम्पर्क :- विश्वेश्वर दयाल मिश्र नगर, बेहजम रोड,
लखीमपुर खीरी, उत्तर प्रदेश
मो. - 09451237049

बाज़ार में रामधन

कैलाश बनवासी

यह बालोद का बुधवारी बाज़ार है।

बालोद इस जिले की एक तहसील है। कुछ साल पहले तक यह सिर्फ़ एक छोटा-सा गांव हुआ करता था। जहां किसान थे, उनके खेत थे, हल-बक्खर थे, उनके बरगद, नीम और पीपल थे। पर अब यह एक छोटा शहर की सारी खूबियां लिए हुए। आसपास के गांव-देहातों को शहर का सुख और स्वाद देने वाला। इसी बालोद के हफ्तावार भरने वाले बुधवारी बाज़ार की बात है। रामधन अपने एक जोड़ी बैल लेकर यहां बेचने पहुंचा था।

बाज़ार अभी भरना बस शुरू ही हुआ था, वैसे भी ढाई-तीन बजे धूप में ख़रीदारी करने कौन निकलता है? इसके बावजूद यहां चारों तरफ़ रंगीनी और रौनक है। पता नहीं क्या बात है, रामधन जब भी यहां आता है, बाज़ार और शहर की रौनक को बढ़ा हुआ ही पाया है।

अपने बैलों को लेकर वह उधर बढ़ गया जहां गाय-बैलों का बाज़ार भरता है। बैलों का यह कोई कम बड़ा बाज़ार नहीं है। बैलों का पूरा हुजूम मौजूद है। दो-ढाई सौ से भला क्या कम होंगे।

रामधन के चेहरे-मोहरे, उसकी चीकट बंडी और मटमैली धोती-जिसका मटमैला रंग किसी साबुन-पानी से नहीं घुलता-देखकर कोई भी सहज जान सकता है कि वह किस स्तर का आदमी है। रामधन के बारे में कुछ मोटी-मोटी